प्रताप सिंह

बनाम

झारखंड राज्य और अन्य

फ़रवरी 2, 2005

[न्यायमूर्तिगण एन. संतोष हेगड़े, एस. एन. वरियावा, बी.पी.सिंह, एच.के. सेमा और एस.बी. सिन्हा]

किशोर न्याय अधिनियम, 1986 - धारा 2 (ज), 3, 18, 26 और 32

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 - धारा 2(ट), 20 और 69।

किशोर अपराधी - आयु - निर्धारण - गणना तिथि- अभिनिर्धारित : किशोर अपराधी की आयु निर्धारित करने की गणना तिथि। अपराध की तारीख है न कि वह तारीख जब उसे प्राधिकरण/न्यायालय के समक्ष पेश किया जाता है।

2000 अधिनियम - प्रयोज्यता - 1986 अधिनियम के तहत शुरू किए गए मामलों के लिए, 2000 अधिनियम के प्रवर्तन की तारीख को लंबित - अभिनिर्धारित किया गया: 2000 का अधिनियम ऐसे मामलों पर लागू होगा जब अभियुक्त ने 18 वर्ष की आयु प्राप्त नहीं की थी। केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाए गए मॉडल नियम इसके प्रवर्तन की तारीख को वर्ष की आयु के वर्ष के लिए निर्धारित किए गए हैं। सरकार - नियम 62 - किशोर न्याय के प्रशासन के लिए संयुक्त राष्ट्रीय मानक न्यूनतम नियम, 1985।

संविधान पीठ के समक्ष वर्तमान अपील में निर्धारण के लिए प्रश्न थे:

1. किशोर अपराधी की आयु का निर्धारण करने में गणना की तारीख क्या होगी, अर्थात, जब अदालत में पेश किया गया था, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा अर्नित दास बनाम भारत संघ में अभिनिर्धारित किया गया था। बिहार राज्य, [2000] एससीसी 488 या जिस तारीख को अपराध किया गया था, जैसा कि उमेश चंद्र बनाम राजस्थान स्टेट, [1982] 2 एससीसी 2022।

2. क्या किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, किशोर न्याय अधिनियम, 1986 के अंतर्गत और 2000 के अधिनियम के प्रवर्तन की तारीख को लंबित कार्यवाही शुरू की गई थी, क्या यह मामला 2000 से लागू होगा?

अपील का निपटारा करते हुए न्यायालय

अभिनिर्धारित: पर सेमा, न्यायमूर्ति [स्वयं के लिए एन. संतोष हेगड़े, एस. एन. वरियावा और बी.पी. सिंह,न्यायमूर्तिगण]

1.1. किशोर की आयु के निर्धारण की गणना तिथि अपराध की तारीख है न कि वह तारीख जब उसे प्राधिकरण या न्यायालय के समक्ष पेश किया जाता है। 11039 - छ

1.2. किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 का संपूर्ण उद्देश्य उपेक्षित अपराधी किशोरों की देखभाल, संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास की व्यवस्था करना है। यह एक लाभकारी विधान है जिसका उद्देश्य उपेक्षित अथवा अपराधी किशोरों को अधिनियम का लाभ उपलब्ध कराना है। क़ानून की व्याख्या लाभकारी विधान यह होना चाहिए कि विधान के उद्देश्य को उस लाभ तक पहुंचाया जाए जिसके लिए वह बनाया गया है और विधान की मंशा को निष्फल न करे। [1031-घ-ड]

1.3. किशोर न्याय अधिनियम, 1986 और किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 के अंतर्गत 'अपराधी किशोर' की परिभाषा के बीच अंतर यह है कि 1986 के अधिनियम में "कानून के साथ संघर्ष में किशोर" अनुपस्थित है। 1986 के अधिनियम में परिभाषा उसके द्वारा किए गए अपराध के संदर्भ में है। यह अपराध की तारीख है कि वह कानून के साथ संघर्ष में था। जब किसी किशोर को सक्षम प्राधिकारी या न्यायालय के समक्ष पेश किया जाता है तो उसने उस तारीख को कोई अपराध नहीं किया है, लेकिन उसे उस कथित अपराध के लिए प्राधिकरण के समक्ष लाया जाता है जो उसने किया है। इसलिए, 1986 के अधिनियम में जो निहित था उसे 2000 के अधिनियम में स्पष्ट किया गया है।

1.4. यह नहीं कहा जा सकता है कि 1986 अधिनियम की धारा 32 के दो स्थानों पर शब्द का उपयोग यह बताता है कि किशोर की आयु के निर्धारण के लिए उत्पादन की तारीख की गणना की जाएगी क्योंकि उसकी उम्र के संबंध में जांच उस तारीख से शुरू होती है जब उसे अदालत के समक्ष लाया जाता है और अन्यथा नहीं। अपराधी किशोर की परिभाषा का अर्थ है एक किशोर जिसे अपराध करते हुए पाया गया है। धारा 32 में नियोजित शब्द एक किशोर

को संदर्भित किया जाता है जिसके बारे में कहा जाता है कि उसने घटना की तारीख जी पर अपराध किया है। इस शब्द का प्रयोग 1986 के अधिनियम की धारा 18 में भी एक से अधिक स्थानों पर किया गया है। अक्सर नहीं, एक अपराधी को अपराध करने के तुरंत बाद गिरफ्तार किया जाता है या कभी-कभी मौके पर गिरफ्तार भी किया जाता है। इससे यह भी पता चलेगा कि किशोरों की गिरफ्तारी और जमानत और हिरासत पर रिहाई, किशोर की गणना की तारीख अपराध की तारीख है न कि उत्पादन की तारीख। इसके अलावा, 1986 अधिनियम की धारा 32 में भी किशोर को पेश करने की परिकल्पना नहीं की गई है अदालत में। [1032-ड-च;1033-घ-च]

1.5. धारा 3 और 26, प्रस्तावना, 1986 अधिनियम के उद्देश्यों और उद्देश्यों के संयुक्त पठन से कोई संदेह नहीं रहता है कि विधायिका का इरादा - उपेक्षित या अपराधी किशोरों को संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास प्रदान करना और उसके अधिनिर्णय के लिए है।

उमेश चंद्र बनाम राजस्थान राज्य, [1982] 2 एससीसी 202 पुष्टि की गई।

अर्नित दास बनाम बिहार राज्य, [20001 5 एससीसी 488, को निरस्त किया गया।

2.1. 2000 का अधिनियम 1986 के अधिनियम के अंतर्गत आरंभ किए गए किसी न्यायालय/प्राधिकरण में लंबित कार्यवाही में लागू होगा और जो वर्ष 2000 के अधिनियम के लागू होने के समय लंबित है और वर्ष 2000 अधिनियम के प्रवर्तन की तारीख को व्यक्ति ने 18 वर्ष की आयु पूरी नहीं की थी।

2.2. यद्यपि 1986 के अधिनियम को 2000 के अधिनियम द्वारा निरस्त कर दिया गया था, 1986 अधिनियम के तहत की गई कोई भी बात या की गई कोई कार्रवाई 2000 अधिनियम की धारा 69 की उपधारा (2) द्वारा बचाई जाती है, जैसे कि कार्रवाई 2000 अधिनियम के प्रावधानों के तहत की गई हो। [1036-घ- ड]

2.3. 2000 अधिनियम की धारा 20 लंबित मामलों के संबंध में विशेष प्रावधान से संबंधित है और नॉन-ऑब्सटेन्टे क्लॉज से शुरू होती है। धारा 20 में उल्लिखित किसी न्यायालय में लंबित किशोर के संबंध में कार्यवाही 2000 अधिनियम के लागू होने से पहले शुरू की गई कार्यवाहियों से संबंधित है और जो 2000 अधिनियम के लागू होने के समय लंबित हैं। शब्द "एक; अदालत" में साधारण आपराधिक अदालतें भी शामिल होंगी। यदि व्यक्ति 1986 के अधिनियम के तहत "किशोर" था, तो कार्यवाही आपराधिक अदालतों में लंबित नहीं होगी। वे

आपराधिक अदालतों में तभी लंबित होंगे जब लड़का 16 साल पार कर चुका हो या लड़की 18 साल पार कर चुकी हो। इससे पता चलता है कि धारा 20 उन मामलों को संदर्भित करता है जहां एक व्यक्ति 1986 के अधिनियम के तहत किशोर नहीं रह गया था, लेकिन अभी तक लंबित 18 वर्ष की आयु पार नहीं की थी। उस न्यायालय में मामला इस प्रकार जारी रहेगा जैसे कि 2000 का अधिनियम पारित नहीं किया गया है और यदि न्यायालय यह पाता है कि किशोर ने कोई अपराध किया है तो वह ऐसे निष्कर्ष को अभिलिखित करेगा और किशोर के संबंध में कोई दंडादेश पारित करने के स्थान पर किशोर को बोर्ड को अग्रेसित करेगा जो उस किशोर के संबंध में आदेश पारित करेगा। 2000 अधिनियम की धारा 16 धारा 16 धारा 1986 के अधिनियम की धारा 22। इसी प्रकार, 2000 अधिनियम की धारा 15 1986 के अधिनियम की धारा 21 के समरूप है। इस प्रकार, ऐसी व्याख्या नहीं करती है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 20(1) का उल्लंघन करता है और किशोर को उससे अधिक दंड नहीं दिया जाता है जो कि लगाया जा सकता है 1986 के अधिनियम के तहत उस पर [1038-ख-ड]

2.4. केंद्र सरकार द्वारा बनाई गई मॉडल नियमावली का नियम 62 यह भी इंगित करता है कि विधानमंडल का इरादा यह था कि 2000 के अधिनियम के प्रावधान लंबित मामलों पर लागू हों, बशर्ते कि जिस तारीख को 2000 अधिनियम लागू हुआ था, वह व्यक्ति 2000 के अधिनियम में परिभाषित शब्द का अर्थ अर्थात उसने 18 वर्ष की आयु पार नहीं की थी। [1039-ग]

उपेंद्र कुमार बनाम बिहार राज्य; भोला भगत बनाम बिहार राज्य, [1997] 8 एससीसी 720; गोपीनाथ घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [19841 अनुपूरक एससीसी 228; भूपराम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (19891 3 एससीसी 1 और प्रदीप कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [1995] अनुपूरक. 4 एससीसी 419, संदर्भित. [1039-घ-च]

पर सिन्हा, न्यायमूर्ति (आंशिक रूप से असहमत):

1.1. 1986 के अधिनियम के अनुसार, अपराधी की आयु की गणना उस तारीख से की जानी चाहिए जब कथित अपराध किया गया था। किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 न केवल एक लाभकारी विधान है, बल्कि एक उपचारात्मक भी है। इस अधिनियम का उद्देश्य वयस्क अपराधियों की तुलना में किशोर की देखभाल, संरक्षण और पुनर्वास प्रदान करना है। किशोर न्याय प्रशासन के लिए संयुक्त राष्ट्र मानक न्यूनतम नियमों

के नियम 4 के संबंध में, यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि आपराधिक जिम्मेदारी के नैतिक और मनोवैज्ञानिक घटक भी किशोर को परिभाषित करने वाले कारकों में से एक थे। [1052-ज;1053-क; 1063-ज;1064-क]

1.2. किसी क़ानून में प्रयुक्त अभिव्यक्ति 'जुवेनाइल' का अर्थ उसकी प्रकृति के कारण एक निश्चित तिथि के संदर्भ में सौंपा जाना चाहिए। किशोर शब्द को एक निश्चित अर्थ दिया जाना चाहिए। संवैधानिक और सांविधिक योजना को ध्यान में रखते हुए, संसद के लिए यह विशेष रूप से यह कहना आवश्यक नहीं था कि अपराध किए जाने की तारीख को किशोर की आयु निर्धारित की जानी चाहिए। सांविधिक स्कीम में यह अन्तर्निहित है। योजना और सामान्य स्थिति और उससे होने वाले परिणामों को ध्यान में रखते हुए संविधि का अर्थ लगाया जाना चाहिए। [1053-ख-घ]

1.3. केवल इसलिए कि उसकी आयु अधिनियम की धारा 26 के संदर्भ में सक्षम न्यायालय या बोर्ड द्वारा विवाद के मामले में निर्धारित की जानी है, इसका मतलब यह नहीं होगा कि उसके लिए प्रासंगिक तारीख पर होगी जिसे वह बोर्ड के समक्ष पेश किया जाता है। यदि इस तरह के तर्क को स्वीकार किया जाता है, इसका परिणाम बेतुकापन होगा क्योंकि, किसी दिए गए मामले में, यह पुलिस अधिकारियों के लिए खुला होगा कि वे उसे बोर्ड के समक्ष पेश न करें, इससे पहले कि वह किशोर न रहे। यदि उसे किशोर होने के बाद पेश किया जाता है, तो बोर्ड के लिए यह आवश्यक नहीं हो सकता है कि वह उसे सुरक्षात्मक हिरासत में भेजे या उसे जमानत पर रिहा करे, जिसके परिणामस्वरूप उसे न्यायिक या पुलिस हिरासत में भेजा जाएगा जो उस उद्देश्य को विफल कर देगा जिसके लिए अधिनियम अधिनियमित किया गया था। कानून को अनिश्चित स्थिति में लागू नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा, अधिनियम के संदर्भ में निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार, जिसमें प्रक्रियात्मक सुरक्षा शामिल होगी, किशोर का मौलिक अधिकार है। एक किशोर के खिलाफ कार्यवाही अधिनियम के प्रावधानों के अनुरूप होनी चाहिए। [1054-ड-छ]

दिलीप साहा बनाम स्टेट ऑफ़ वेस्ट बंगाल,एआईआर [1978] कलकत्ता 529, संदर्भित

1.4. क़ानून को इस तरह से समझा जाना चाहिए ताकि इसे *यूटी रेस मैगिस वैलेट क्वाम पेरेट* के सिद्धांत पर प्रभावी और ऑपरेटिव बनाया जा सके। अदालतें किसी भी निर्माण के खिलाफ दृढ़ता से झुकती हैं जो एक क़ानून को निरर्थक बना देती हैं। जब दो अर्थ दिए जाते हैं, एक क़ानून को बिल्कुल अस्पष्ट, पूरी तरह से असभ्य और बिल्कुल अर्थहीन बनाता है

और दूसरा निश्चितता और सार्थक की ओर ले जाता है, तो ऐसी स्थिति में बाद वाले का पालन किया जाना चाहिए। [1055-ग-घ]

तिनसुखिया इलेक्ट्रिक सप्लाई कंपनी लिमिटेड बनाम असम राज्य और अन्य [1989] 3 एससीसी 709; मैसर्स आन्ध्र बैंक बनाम बी सत्यनारायण एवं संगठन, [2004] 2 एससीसी 657 और भारतीय हस्तशिल्प एम्पोरियम एवं अन्य बनाम भारत संघ और अन्य, [2003] 7 एससीसी 589, का उल्लेख किया गया है।

1.5. एक उपयुक्त मामले में अदालत एक आदेश पारित करने के लिए शक्तिहीन नहीं है जैसा कि कानून के तहत विचार किया जाता है यदि स्थिति ऐसी मांग करती है, लेकिन केवल इसलिए कि किसी व्यक्ति को अदालत के समक्ष पेश किया जाता है जब वह अपनी इच्छा से या जांच एजेंसी द्वारा अपनाई गई साजिशों के कारण बहुमत प्राप्त करता है, तो यह इस तथ्य का निर्धारण नहीं होगा कि उक्त व्यक्ति के साथ अलग तरह से निपटा जाना है। कानून केवल अपवादों के अधीन प्रक्रियाओं के सख्त पालन का पक्षधर है। [1055-छ-ज]

अर्नित दास बनाम बिहार राज्य [2000] 5 एससीसी 488 को निरस्त कर दिया गया।

1.6. 1986 के अधिनियम के तहत 'किशोर' की परिभाषा, निश्चित रूप से उस व्यक्ति को संदर्भित करती है जिसे अपराध करते हुए पाया गया है लेकिन 2000 के अधिनियम में इसे स्पष्ट किया गया है। 1986 अधिनियम के प्रावधानों में न केवल उन किशोरों को संरक्षण प्रदान करने की मांग की गई है, जिन्हें अपराध करते हुए पाया गया है, बल्कि उन लोगों को भी संरक्षण प्रदान किया गया है जिन पर 1986 के अधिनियम की धारा 3 के साथ-साथ 2000 के अधिनियम के संदर्भ में भी आरोप लगाया गया था, जब एक जांच शुरू की गई है, भले ही किशोर ने ऐसा करना बंद कर दिया हो क्योंकि वह 16 और 18 वर्ष की आयु पार कर चुका है, जैसा भी मामला हो, ऐसे व्यक्ति के संबंध में भी इसे जारी रखा जाना चाहिए जैसे कि वह किशोर बना हुआ था। इसलिए 1986 के अधिनियम की धारा 3 को प्रभावी नहीं किया जा सकता है यदि यह माना जाता है कि यह केवल किशोर के अपराध के बाद लागू होता है। [1055-ड-च]

2.1. 2002 के अधिनियम में 1986 के अधिनियम के अंतर्गत लंबित मामलों में सीमित अनुप्रयोग होंगे। 1986 के अधिनियम के अनुसार, किसी व्यक्ति पर किसी भी न्यायालय में मुकदमा चलाया जा सकता है जो किशोर नहीं था। 2000 के अधिनियम की धारा 20 ऐसी स्थिति का ध्यान रखती है जिसमें कहा गया है कि इसके बावजूद उस न्यायालय में विचारण

जारी रहेगा जैसे कि वह अधिनियम पारित नहीं किया गया है और यदि वह अपराध करने का दोषी पाया जाता है, तो इस आशय का निष्कर्ष दोषसिद्धि के निर्णय में दर्ज किया जाएगा, यदि कोई हो, लेकिन किशोर के संबंध में कोई सजा पारित करने के बजाय, उसे बोर्ड को भेज दिया जाएगा जो अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार आदेश पारित करेगा जैसे कि वह जांच पर संतुष्ट हो गया है कि एक किशोर ने अपराध किया है। इस प्रकार, उक्त प्रावधान में एक कानूनी कल्पना बनाई गई है। एक कानूनी कल्पना को इसका पूरा प्रभाव दिया जाना चाहिए, हालांकि इसकी सीमाएं हैं। [1057-घ-च]

भावनगर विश्वविद्यालय बनाम पालिताना शुगर मिल (पी.) लिमिटेड और अन्य, [2003] 2 एससीसी 111; आईटीडब्लू सिग्नोड इंडिया लिमिटेड बनाम कलेक्टर ऑफ सेंट्राल एक्साइज, (2003) 9 स्केल 720; अशोक लेलैंड लिमिटेड बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्न, [2004] 3 एससीसी 1 और मैसर्स मंडी उद्योग लिमिटेड बनाम राम लाल [2002 का सीए संख्या 2946 25.1.2005 को सुप्रीम कोर्ट द्वारा निर्णीत), संदर्भित किया गया।

2.2. इस प्रकार, कल्पना के कारण, एक व्यक्ति, हालांकि किशोर नहीं है, को सजा के उद्देश्य से बोर्ड द्वारा एक माना जाना चाहिए जो इस स्थिति का ख्याल रखता है कि व्यक्ति हालांकि 1986 के अधिनियम के संदर्भ में किशोर नहीं है, लेकिन फिर भी उक्त सीमित उद्देश्य के लिए 2000 अधिनियम के तहत ऐसा माना जाएगा। अधिनियम लाभकारी परिणामों का प्रावधान करता है और इस प्रकार, इसे उदारतापूर्वक समझा जाना आवश्यक है। [1057-ज 1058-क]

2.3. एक हितकारी विधान का यह उदारतापूर्वक अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि जो व्यक्ति सांविधिक योजना का अनुपालन नहीं करता है, उसे उसके सामने लाया जा सके।

दीपल गिरीशभाई सोनी और अन्य बनाम यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कं. लि. बड़ौदा, [2004] 5 एससीसी 385, का उल्लेख किया गया है।

2.4. इसलिए, 2000 के अधिनियम की धारा 20 लागू होगी कोई व्यक्ति 2000 के अधिनियम के प्रवर्तन की तारीख को 18 वर्ष से कम आयु का हो। अधिनियम की धारा 20 को आकर्षित करने के उद्देश्य से, यह स्थापित किया जाना चाहिए कि: (i) लागू होने की तारीख को वह कार्यवाही जिसमें याचिकाकर्ता पर आरोप लगाया गया था, लंबित थी; और (ii) उस दिन वह 18 वर्ष से कम आयु का था। उक्त अधिनियम के प्रयोजन के लिए, उपर्युक्त दोनों शर्तों को पूरा किया जाना अपेक्षित है। [1058-घ-ड]

2.5. किसी क़ानून को पूर्वव्यापी प्रभाव देने का प्रतिबंध तभी उत्पन्न होता है जब वह किसी व्यक्ति के निहित अधिकार को छीन लेता है। 2000 अधिनियम की धारा 20 के कारण किसी व्यक्ति का कोई निहित अधिकार नहीं छीना गया है, बल्कि इस प्रकार केवल एक किशोर को अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान की गई है। [1058-ज; 1059-क]

रतन लाई बनाम पंजाब राज्य [1964] 7 एससीआर 676; बशीर उर्फ एन.पी. बशीर बनाम केरल राज्य, [2004] 3 एससीसी 609; जिले सिंह बनाम हरियाणा और अन्य, जेटी (2004) 8 एससी 589 और दयाल सिंह बनाम स्टेट ऑफ़ राजस्थान ,जेटी(2004) अनुपूरक 1 एससी 37,को संदर्भित किया गया है।

अटॉर्नी जनरल का संदर्भ (2001 का नंबर 2) (2004) 2 एसी 72 और आर (यूटली के आवेदन पर) बनाम गृह विभाग के लिए राज्य सचिव, (2004) 4 सभी ईआर 1, संदर्भित।

2.6. किसी क़ानून की व्याख्या उसके पाठ और संदर्भ पर निर्भर करती है और उस संबंध और उद्देश्य पर निर्भर करती है जिसके साथ उसे बनाया गया था। 2000 अधिनियम का प्रावधान इसके अलावा एक उपचारात्मक क़ानून है। इस प्रकार, उन्हें उदार निर्माण दिया जाना आवश्यक है। एक लंबित कार्यवाही में लागू एक उपचारात्मक क़ानून का मतलब यह नहीं होगा कि इस प्रकार एक पूर्वव्यापी प्रभाव और पूर्वव्यापी संचालन दिया जा रहा है। [1061-ड-च]

जीपी सिंह द्वारा वैधानिक व्याख्या के सिद्धांत नौवां संस्करण, 2004, पृष्ठ 7.33, संदर्भित।

2.7. ऐसे मामले में जहां अंतर्राष्ट्रीय संधियों के अनुसरण में या उन्हें आगे बढ़ाते हुए अतिरिक्त संरक्षण प्रदान किया गया था और 1986 के अधिनियम के लागू होने के बाद संसद द्वारा एकत्र किए गए अनुभव को ध्यान में रखते हुए, इसे इस तरह से पढ़ा जाना चाहिए ताकि विस्तारित लाभ 2000 अधिनियम के तहत जूवेनाइल को भी दिया जा सके। इसके अलावा, धारा 69 की उप-धारा (2) में प्रावधान है कि सभी कार्यवाहियों को नए अधिनियम के तहत अभिनिर्धारित किया गया माना जाएगा। ये है इस तथ्य का भी सुझाव है कि नया अधिनियम, उपरोक्त के लिए होगा एक हद तक, एक लंबित कार्यवाही पर लागू होता है जिसे 1986 अधिनियम के तहत शुरू किया गया था। (1061-छ-ज;1062-क]

3.1. अपराधी किशोर की आयु मॉडल नियम 62 के संदर्भ में निर्धारित नहीं की जा सकती है। किसी मुद्दे का निर्धारण करने में दूसरों पर कुछ दस्तावेजों को ध्यान में रखने के लिए

अदालत को अनिवार्य करने वाला कोई भी कानून, केवल कानून द्वारा प्रदान किया जाना चाहिए। केवल वैध रूप से बनाया गया कानून ही भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 35 के आलोक में इस तरह के प्रश्न के निर्धारण के उद्देश्य से साक्ष्य की सराहना करने की अदालत की शक्ति को छीन सकता है। यह कार्य केन्द्र सरकार द्वारा कार्यकारी शक्ति का प्रयोग करके नहीं किया जा सकता है। [1062-च-छ]

भारत संघ बनाम नवीन जिंदल, [2004] 2 एससीसी 510; उत्तर प्रदेश राज्य बनाम जोहरी मल, [2004] 4 एससीसी 714; बीरद मल सिंघवी बनाम आनंद पुरोहित, एआईआर (1988) एससी 1796 और सुशील कुमार बनाम राकेश कुमार, [20031 8 एससीसी 673, का उल्लेख किया गया है।

3.2. मॉडल नियमों पर सहमति नहीं दी जा सकती क्योंकि इन्हें अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार तैयार नहीं किया गया है ताकि उन सिद्धांतों को आकर्षित किया जा सके जो वैध रूप से बनाए गए नियमों को अधिनियम के हिस्से के रूप में माना जाना है। केन्द्र सरकार एक सांविधिक पदाधिकारी है। इसके कार्य केवल अधिनियम की धारा 70 द्वारा सीमित हैं। इसे कोई नियम बनाने के लिए अधिकृत नहीं किया गया है। नियम बनाने की ऐसी शक्ति केवल राज्य को सौंपी गई है। इस प्रकार, केंद्र सरकार के पास इस मामले में कोई भूमिका नहीं है और न ही वह 'कठिनाइयों को दूर करने के लिए' अपनी शक्ति का सहारा लेकर ऐसी शक्ति का प्रयोग कर सकती है। [1062-ख-घ]

चीफ फारेस्ट कांसेर्वटर(वाइल्डलाइफ) और अन्य बनाम निसार खान, [2003] 4 एससीसी 595 और नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम स्वर्ण सिंह और अन्य, [2004] 3 एससीसी 297, प्रतिष्ठित

मैसर्स जालान ट्रेडिंग कं. प्रा. लि. बनाम मिल मजदूर सभा, एआईआर (1967) एससी 691 एट 703, संदर्भित है।

लिवरपूल और लंदन एसपी एंड आई एसोसिएशन लिमिटेड बनाम एमवी सी सक्सेस 1 और एएनआर, 120041 9 एससीसी 512, का उल्लेख किया गया है।

रेजिना (डेली) बनाम गृह विभाग के राज्य सचिव, (2001) 2 एसी 532; एस. वी. मकवानयाने, (1995) 3 एसए 391; (संदर्भ पुनः लोक सेवा कर्मचारी संबंध अधिनियम (अल्बर्टा), [1987] 1 एससीआर 313; (की धारणा मासूमियत और मानव अधिकारों पर

यूरोपीय सम्मेलन (1987) बीवीइआरएफजीइ 74, 3580; तविता बनाम आप्रवासन मंत्री, (1994) 2 एनजेडएलआर 257; संयुक्त किंगडम प्रैट बनाम जमैका अटॉर्नी-जनरल जमैका , (1994) 2 एसी 1; एटकिंस बनाम एच वर्जीनिया, (2002) 536 यूएस 304; लॉरेंस बनाम टेक्सास, (2003) 539 यूएस 558; हम्दी बनाम रम्सफेल्ड, (2004) 72 यूएसएलडब्ल्यू 4607; रसेल बनाम बुश, (2004) 72 यूएसएलडब्ल्यू 4596; रम्सफील्ड बनाम पडिला, (2004) 72 यूएसएलडब्ल्यू 4584; फ्रैंक सी, 70 एनवाई 2 डी 408; अल्फ्रेडो बनाम सुपीरियर कोर्ट, 849 पी. 2डी 1330 (कैल. 1993); रॉबिन्सन बनाम टेक्सास, 707 एसडब्ल्यू 2 डी 47 और इलिनोइस बनाम स्टफलेबीन, 392 एनई 2 डी 414, संदर्भित।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2005 की आपराधिक अपील संख्या 210 ।

झारखंड उच्च न्यायालय के दिनांक 10.9.2001 के निर्णय और आदेश से रांची में कोर्ट क्रिमिनल. आर. एन. 2001 का 98 ।

अमरेंद्र शरण, एडिशनल सॉलिसिटर जनरल, पीएस मिश्रा, आलोक कुमार, मनु शंकर मिश्रा, तथागत हर्षवर्धन, शिशिर पिनाकी, उपस्थित पक्षों के लिए अमितेश चंद्र मिश्रा, उपेंद्र मिश्रा, ध्रुब झा, हिमांशु शेखर, अंसुल, कृष्णानंद पांडेय, देवाशीष भरूका, श्रीमती सुधा गुप्ता, सुश्री महारुख अदनवाला, त्रिदीप पाइस और निखिल नैय्यर शामिल हुए।

न्यायालय के निर्णय

एच.के. सेमा, न्यायमूर्ति अनुमति मंजूर की गई।

यह अपील झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा रांची में 2001 के आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 98 में पारित निर्णय और आदेश दिनांक 10.9.2001 के खिलाफ निर्देशित है।

संक्षेप में कहा गया है कि वर्तमान अपील दायर करने को शुरू करने वाले तथ्य इस प्रकार हैं;

बोकारो शहर में पुलिस के समक्ष प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई थी, जो धारा 364 क, 302/201 आईपीसी के तहत अपराध के लिए धारा 120 ख आईपीसी के साथ पठित धारा 364 क, 302/201 आईपीसी के तहत अपराध के लिए दिनांक 1.1.1999 को दर्ज की गई थी कि अपीलकर्ता पर साजिशकर्ताओं में से एक के रूप में आरोप लगाया गया था कि वह मृतक की जहर से मौत का कारण बना था। एफआईआर के आधार पर अपीलकर्ता को गिरफ्तार किया गया और 22.11.1999 को सी.जे.एम. चास के समक्ष पेश किया गया। पेश

करने पर, विद्वान सी.जे.एम. ने अपीलकर्ता की उम्र लगभग 18 वर्ष आंकी। 28.2.2000 को, अपीलकर्ता की ओर से एक याचिका दायर की गई थी जिसमें दावा किया गया था कि वह घटना की तारीख यानी 31.12.1998 को नाबालिग था, जिसके बाद सी.जे.एम. ने मामले को किशोर न्यायालय में भेज दिया। अपीलकर्ता को 3.3.2000 को किशोर न्यायालय में पेश किया गया। उसके पेश होने पर किशोर न्यायालय ने उपस्थिति के आधार पर अपीलकर्ता की आयु 15 से 16 वर्ष के बीच आंकी और सिविल सर्जन को मेडिकल बोर्ड का गठन करने का निर्देश दिया गया वैज्ञानिक परीक्षा द्वारा अपीलकर्ता की उम्र का आकलन करने और एक रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए। ऐसा कोई मेडिकल बोर्ड गठित नहीं किया गया था। इस प्रकार, विद्वान एसीजेएम ने पक्षकारों से साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए कहा और केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के स्कूल छोड़ने के प्रमाण पत्र और अंक पत्र की जांच करने पर यह निष्कर्ष निकला कि अपीलकर्ता की आयु 31.12.1998 को 16 वर्ष से कम थी और अपीलकर्ता की जन्म तिथि 18.12.1983 को पूर्वोक्त प्रमाण पत्र में दर्ज थी। इसके बाद अपीलकर्ता को जमानत पर रिहा कर दिया गया।

इससे व्यथित होकर सूचनादाता ने प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश के समक्ष अपील दायर की, जिन्होंने 1996 में दिए गए इस न्यायालय के निर्णय का उल्लेख करने के बाद अर्नित दास बनाम बिहार राज्य, [2000] 5 एससीसी 488 ने सी 19.2.2001 को अपील का निपटारा करते हुए कहा कि किशोर न्यायालय ने इस तथ्य पर ध्यान नहीं देकर गलती की थी कि किशोर न्यायालय के समक्ष पेश करने की तारीख यह तय करने के लिए प्रासंगिक तारीख थी कि अपीलकर्ता परीक्षण के उद्देश्य से किशोर था या नहीं और अपीलकर्ता की उम्र का आकलन करने के लिए एक नई जांच का निर्देश दिया। इससे व्यथित होकर अपीलकर्ता ने आपराधिक पुनरीक्षण याचिका दायर करके उच्च न्यायालय का रुख किया। उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण का निपटान करते हुए अर्नित दास (ऊपर) में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का पालन किया है और माना है कि गणना की तारीख अदालत के समक्ष अभियुक्त के उपस्थित करने की तारीख है, न कि अपराध की घटना की तारीख।

उच्च न्यायालय ने कहा कि किशोर की आयु का निर्धारण करने के लिए, 1986 अधिनियम के प्रावधान लागू होंगे न कि 2000 अधिनियम। हालांकि, उच्च न्यायालय ने यह विचार किया कि स्कूल में दर्ज जन्म तिथि और स्कूल प्रमाण पत्र, अपीलकर्ता की उम्र तय करने के लिए सबसे अच्छा सबूत होना चाहिए। उच्च न्यायालय का यह भी विचार था कि उम्र के

प्रमाण में कोई अन्य साक्ष्य बहुत निम्न गुणवत्ता का होगा। चूंकि जांच लंबित है, इसलिए हमें इस प्रश्न की जल्दी-पड़ताल करने की आवश्यकता नहीं है।

अर्नित दास बनाम बिहार राज्य [2000] 5 एससीसी 488 में परस्पर विरोधी विचारों पर ध्यान देने के बाद उमेश चन्द्र बनाम राजस्थान राज्य, [1982] 2 एससीसी 202 दिनांक 7-2-2003 के आदेश द्वारा इस मामले को संविधान पीठ को भेज दिया है। यह इस प्रकार है:

"उच्च न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय में अरनीत दास बनाम भारत संघ मामले में इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की पीठ के फैसले पर भरोसा किया है। बिहार राज्य, [2000] 5 एससीसी 488 । याचिकाकर्ता के विद्वान वकील का निवेदन यह है कि अर्नित दास (ऊपर) में, उमेश चंद्र बनाम राजस्थान राज्य, [1982] 2 एससीसी 202 पर विचार नहीं किया गया था। यह मुद्दा बार-बार उठने वाला है और इस मामले में लिए गए कानून के दृष्टिकोण का नए अधिनियम पर प्रभाव पड़ने की संभावना है, अर्थात, किशोर न्याय (देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 में भी यह मामला है और इस न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा सुनवाई के योग्य है। निर्देश मांगते हुए भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष पेश किया जाए।

इस प्रकार यह मामला हमारे समक्ष रखा गया है।

दोहरे प्रश्न जिनके लिए आधिकारिक निर्णय की आवश्यकता होती है:

(क). क्या घटना की तारीख के लिए गणना तिथि होगी किशोर अपराधी के रूप में कथित अपराधी की आयु का निर्धारण करना या वह तारीख जब उसे न्यायालय/सक्षम प्राधिकारी में पेश किया जाता है।

(ख). क्या 2000 का अधिनियम 1986 अधिनियम के तहत शुरू की गई कार्यवाही के मामले में लागू होगा और लंबित है जब 2000 का अधिनियम था इसे 1-4-2001 से लागू किया गया है।

प्रश्न (क)

क्या घटना की तारीख निर्धारित करने के लिए गणना की तारीख होगी जब किशोर अपराधी के रूप में कथित अपराधी की आयु या वह तारीख जब उसे न्यायालय/सक्षम प्राधिकारी में पेश किया जाता है।

श्री मिश्रा प्रस्तुत करते हैं कि उमेश चंद्र (ऊपर) में निर्णय दिया गया था इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने सही कानून निर्धारित किया है और अर्नित दास (ऊपर) मामले में दो जजों की बेंच के फैसले को सही कानून निर्धारित करने वाला नहीं कहा जा सकता है. श्री मिश्रा यह भी प्रस्तुत करते हैं कि अर्नित दास (ऊपर) के फैसले ने उमेश चंद्र (ऊपर) में तीन न्यायाधीशों की पीठ के फैसले पर ध्यान नहीं दिया है। श्री मिश्रा ने किशोर न्याय अधिनियम, 1986 (इसके बाद 1986 अधिनियम के रूप में संदर्भित) के उद्देश्यों और उद्देश्यों का भी उल्लेख किया और प्रस्तुत किया कि पूरा उद्देश्य किशोर को उस अपराध के लिए सुधारना और पुनर्वास करना है जो उसने कथित रूप से किया है और यदि अपराध की तारीख को किशोर की उम्र की गणना के रूप में नहीं लिया जाता है, अधिनियम का उद्देश्य ही पराजित हो जाएगा। इस संबंध में, उन्होंने अधिनियम की धारा 18, 20, 26 और 32 का उल्लेख किया है। इसके विपरीत श्री शरण अधिनियम के उद्देश्यों और उद्देश्यों और अधिनियम की विभिन्न धाराओं को संदर्भित करते हैं और विशेष रूप से इस बात पर जोर देते हैं कि अधिनियम की धारा 32 में इस शब्द का उपयोग किया गया है और प्रस्तुत करता है कि प्रावधानों के साथ-साथ अधिनियम की योजना के संचयी पठन से पता चलता है कि तारीख निर्धारित करने की गणना तिथि किशोर के मामले में किशोर का मामला तभी प्रभावी होगा जब कोई किशोर प्राधिकारी/न्यायालय के समक्ष उपस्थित होगा या उसे लाया जाएगा न कि अपराध की तारीख।

इस स्तर पर हम 1986 की प्रस्तावना के साथ-साथ उद्देश्य पर भी ध्यान दे सकते हैं:

"उपेक्षित या अपराधी किशोरों की देखभाल, संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास के लिए और अपराधी किशोरों से संबंधित और उनके स्वभाव से संबंधित कुछ मामलों के अधिनिर्णय के लिए प्रदान करने के लिए एक अधिनियम।

इसे संसद द्वारा भारत गणराज्य के सैंतीसवें वर्ष में अधिनियमित किया गया जो इस प्रकार है:

प्रीफेटरी नोट-उद्देश्यों और कारणों का कथन - की समीक्षा मौजूदा बाल अधिनियमों के कार्यकरण से यह पता चलता है कि उन बच्चों पर अधिक ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है जो सामाजिक कुसमायोजन, अपराध अथवा उपेक्षा की स्थितियों में पाए जाते हैं। वयस्कों के लिए उपलब्ध न्याय प्रणाली को किशोरों पर लागू करने के लिए उपयुक्त नहीं माना जाता है। यह भी आवश्यक है कि पूरे देश में एक समान किशोर न्याय प्रणाली उपलब्ध हो जिसमें

देश में बदलती सामाजिक, सांस्कृतिक और आथक स्थिति में सभी पहलुओं से निपटने के लिए पर्याप्त प्रावधान हो। अनौपचारिक प्रणालियों और समुदाय आधारित कल्याण की बड़ी भागीदारी की भी आवश्यकता है ऐसे किशोरों की देखरेख, संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास में विभिन्न एजेंसियों के साथ विचार-विमर्श किया जाता है।

2. इस संदर्भ में, प्रस्तावित कानून का उद्देश्य निम्नलिखित उद्देश्यों को प्राप्त करना है:

(i). देश में किशोर न्याय के लिए एक समान विधिक ढांचा निर्धारित करना ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि किसी भी परिस्थिति में कोई भी बच्चा जेल अथवा पुलिस लॉक-अप में न हो। यह किशोर कल्याण बोर्डों और किशोर न्यायालयों की स्थापना करके सुनिश्चित किया जा रहा है;

(ii). सामाजिक कुसमायोजन की किसी भी स्थिति में पाए जाने वाले बच्चे की विकासात्मक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए किशोर अपराध की रोकथाम और उपचार के लिए एक विशेष दृष्टिकोण प्रदान करना;

(iii). देखभाल, संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास के लिए आवश्यक मशीनरी और बुनियादी ढांचे का उल्लेख करना। ग्राम किशोर न्याय प्रणाली के दायरे में आने वाले बच्चों की श्रेणियां। इसे पर्यवेक्षण गृहों, उपेक्षित किशोरों के लिए किशोर गृहों और अपराधी किशोरों के लिए विशेष गृहों की स्थापना करके प्राप्त करने का प्रस्ताव है;

(iv). किशोर प्रशासन के लिए मानदंड और मानक स्थापित करना जांच और अभियोजन, अधिनिर्णय और के संदर्भ में न्याय स्वभाव, और देखभाल, उपचार और पुनर्वास;

(v). किशोर न्याय की औपचारिक प्रणाली और उपेक्षित या सामाजिक रूप से कुसमायोजित बच्चों के कल्याण में लगी स्वैच्छिक एजेंसियों के बीच उचित संबंध और समन्वय विकसित करना और विशेष रूप से उनकी जिम्मेदारियों और भूमिकाओं के क्षेत्रों को परिभाषित करना;

(vi). किशोरों के संबंध में विशेष अपराधों का गठन करना और उनके लिए दंड का प्रावधान करना;

(vii). किशोर न्याय प्रशासन के लिए संयुक्त राष्ट्र मानक न्यूनतम नियम के अनुरूप देश में किशोर न्याय प्रणाली के प्रचालन को लाने के लिए राष्ट्रीय बाल न्याय प्रणाली (एनबीएस) को एक राष्ट्रीय बाल न्याय नीति (एनआरडी) के अंतर्गत राष्ट्रीय किशोर न्याय प्रणाली

(एनआरडी) के अंतर्गत किशोर न्याय प्रणाली के संचालन के लिए राष्ट्रीय किशोर न्याय प्रणाली के अंतर्गत किशोर न्याय प्रणाली के संचालन के लिए राष्ट्रीय किशोर न्याय प्रणाली के अंतर्गत किशोर न्याय प्रशासन के लिए राष्ट्रीय मानक न्यूनतम नियम के अनुरूप बनाने के लिए राष्ट्रीय न्याय प्रणाली को लागू करने के आसपास।

3. चूंकि इसके विभिन्न प्रावधान देश के विभिन्न हिस्सों में लागू होते हैं, इसलिए वे इस विषय पर संबंधित कानूनों को प्रतिस्थापित करेंगे जैसे कि बाल अधिनियम, 1960 और इस विषय पर अन्य राज्य अधिनियम।“

इस प्रकार, अधिनियम का संपूर्ण उद्देश्य उपेक्षित अपराधी किशोरों की देखभाल, संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास प्रदान करना है। यह एक लाभकारी विधान है जिसका उद्देश्य अधिनियम के लाभ उपलब्ध कराना है। उपेक्षित या अपराधी किशोरों के लिए। यह स्थापित कानून है कि लाभकारी विधान के संविधि की व्याख्या निम्नलिखित कारणों को आगे बढ़ाने के लिए होनी चाहिए। कानून उस लाभ के लिए जिसके लिए इसे बनाया गया है और कानून के इरादे को विफल करने के लिए नहीं।

हम इस स्तर पर, अपराधी किशोर की परिभाषा पर भी ध्यान दे सकते हैं। 1986 के अधिनियम की धारा 2 की उप-धारा (ङ) अपराधी किशोर को परिभाषित करती है:

(ङ) अपराधी किशोर से ऐसा किशोर अभिप्रेत है जो अपराध किया है;"

2000 अधिनियम की धारा 2 की उप-धारा (l) "कानून के साथ संघर्ष में किशोर" को परिभाषित करती है जिसका अर्थ है जो अपराध करने का आरोप है। 1986 अधिनियम और 2000 अधिनियम की परिभाषाओं के बीच उल्लेखनीय अंतर यह है कि 1986 के अधिनियम में "कानून के साथ संघर्ष में किशोर" अनुपस्थित है। 1986 के अधिनियम में अपराधी किशोर की परिभाषा, जैसा कि ऊपर देखा गया है, उसके द्वारा किए गए अपराध के संदर्भ में है।

यह अपराध की तारीख है कि वह कानून के साथ संघर्ष में था। जब एक किशोर को सक्षम प्राधिकारी/अदालत के समक्ष पेश किया जाता है जब उसने उस तारीख को कोई अपराध नहीं किया है, लेकिन उसे कथित अपराध के लिए प्राधिकरण के सामने लाया गया था जो उसने किया है। इसलिए, हमारे विचार में, 1986 के अधिनियम में जो निहित था, उसे 2000 के अधिनियम में स्पष्ट किया गया है।

1986 के अधिनियम की धारा 32 अनुमान और निर्धारण से संबंधित है उम्र का, जो इस प्रकार है:

"32. आयु की धारणा और निर्धारण - (1) जहां सक्षम प्राधिकारी को यह प्रतीत होता है कि इस अधिनियम के उपबंधों में से किसी के अधीन उसके समक्ष लाया गया व्यक्ति (साक्ष्य देने के प्रयोजन से अन्यथा) किशोर है तो सक्षम प्राधिकारी उस व्यक्ति की आयु के बारे में सम्यक जांच करेगा और उस प्रयोजन के लिए ऐसे साक्ष्य लेगा जो आवश्यक हों और निष्कर्ष अभिलिखित करेगा कि वह व्यक्ति किशोर है या नहीं, उसकी उम्र लगभग बताई जा सकती है।

(2) सक्षम प्राधिकारी का कोई आदेश केवल किसी उत्तरवर्ती प्रमाण से अविधिमान्य नहीं समझा जाएगा कि जिस व्यक्ति के संबंध में आदेश किया गया है वह किशोर नहीं है और सक्षम प्राधिकारी द्वारा इस प्रकार उसके समक्ष लाए गए व्यक्ति की आयु अभिलिखित आयु इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, उस व्यक्ति की सही उम्र माना जाएगा।

श्री शरण ने इस बात पर जोर दिया कि इस शब्द का प्रयोग धारा के दो स्थानों पर किया गया है और तर्क दिया गया है कि यह शब्द सुझाव देता है कि किशोर की आयु के निर्धारण के लिए उत्पादन की तारीख की गणना की जाएगी क्योंकि उसकी उम्र के संबंध में जांच उस तारीख से शुरू होती है जब उसे अदालत के सामने लाया जाता है और अन्यथा नहीं। हम इस निवेदन को स्वीकार करने में असमर्थ हैं। हमने पहले ही देखा है कि अपराधी किशोर की परिभाषा एक किशोर को दोषी ठहराती है जिसे अपराध करते हुए पाया गया है। धारा 32 में नियोजित शब्द एक किशोर को संदर्भित किया जाता है जिसके बारे में कहा जाता है कि उसने घटना की तारीख को अपराध किया है। हम 1986 के अधिनियम की धारा 18 के

प्रावधानों पर भी ध्यान दे सकते हैं। धारा 18 में किशोरों की जमानत और हिरासत का प्रावधान है। यह इस प्रकार है।

18. किशोरों की जमानत और अभिरक्षा (1) जब किसी जमानती या गैर-जमानती अपराध का अभियुक्त कोई व्यक्ति और जाहिरा तौर पर कोई किशोर गिरफ्तार किया जाता है या निरुद्ध किया जाता है या उपस्थित होता है या किशोर न्यायालय के समक्ष लाया जाता है तब ऐसा व्यक्ति, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, ज़मानत के साथ या बिना ज़मानत के जमानत पर रिहा किया जाए। लेकिन यदि उचित आधार दिखाई देते हैं तो उसे रिहा नहीं किया जाएगा। यह मानते हुए कि रिहाई से उसे सहयोग में लाने की संभावना है किसी भी ज्ञात अपराधी या उसे नैतिक खतरे में डाल दें या उसकी रिहाई न्याय के मूल भावना को हरा देगा।

(2). गिरफ्तार किए गए ऐसे व्यक्ति को जमानत पर रिहा नहीं किया जाता है पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी द्वारा उप-धारा (I) के तहत, ऐसा अधिकारी उसे एक अवलोकन गृह में रखा जाएगा या निर्धारित तरीके से सुरक्षा का स्थान (लेकिन पुलिस स्टेशन में नहीं या जेल) जब तक उसे किशोर न्यायालय के समक्ष नहीं लाया जा सकता है।

(3). जब ऐसे व्यक्ति को उप-धारा (I) के तहत जमानत पर रिहा नहीं किया जाता किशोर न्यायालय द्वारा, उसे जेल में डालने के बजाय, एक आदेश उसे एक अवलोकन गृह या सुरक्षा के स्थान पर भेजने के लिए उसके बारे में जांच के लंबित रहने के दौरान ऐसी अवधि के रूप में हो सकता है आदेश में निर्दिष्ट किया जाए।

यह ध्यान दिया जाएगा कि इज शब्द का उपयोग एक से अधिक स्थानों में किया गया है इस धारा में भी। अक्सर नहीं, एक अपराधी को तुरंत बाद गिरफ्तार किया जाता है एक अपराध कथित रूप से किया गया है या कुछ समय के लिए घटनास्थल से गिरफ्तार भी किया गया है।

इससे यह भी पता चलेगा कि गिरफ्तारी और जमानत पर रिहाई और हिरासत में किशोर की गणना की तारीख अपराध की तारीख है न कि उत्पादन की तारीख।

इसके अलावा, अधिनियम की धारा 32 जिस पर प्रतिवादी के वकील द्वारा बहुत अधिक भरोसा किया गया है, अदालत में किशोर के उत्पादन की परिकल्पना नहीं करता है।

हम उपयोगी रूप से अधिनियम 1986 की धारा 3 और 26 का भी संदर्भ ले सकते हैं। अधिनियम की धारा 3 और 26 में लिखा है:

"3. किशोर के संबंध में 'पूछताछ की निरंतरता' जो किशोर नहीं रह गया है। जहां किसी किशोर के विरुद्ध जांच शुरू की गई है और ऐसी जांच के दौरान किशोर ऐसा नहीं रह जाता है, वहां इस अधिनियम में या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, जांच जारी रखी जा सकेगी और ऐसे व्यक्ति के संबंध में आदेश ऐसे किए जा सकेंगे मानो वह व्यक्ति किशोर बना हुआ था।

“26. लंबित मामलों के संबंध में विशेष उपबंध। - इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, किशोर के संबंध में सभी कार्यवाहियां किसी भी क्षेत्र में किसी भी न्यायालय में लंबित हैं, जिस तारीख को यह अधिनियम आता है। उस क्षेत्र में लागू होने पर, में जारी रखा जाएगा। कि न्यायालय इस प्रकार मानो यह अधिनियम पारित नहीं किया गया था और यदि न्यायालय यह पाता है कि किशोर ने कोई अपराध किया है तो वह ऐसे निष्कर्ष को अभिलिखित करेगा और किशोर के संबंध में कोई दंडादेश पारित करने के स्थान पर किशोर को किशोर न्यायालय को अग्रेसित करेगा जो इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार उस किशोर के संबंध में आदेश इस प्रकार पारित करेगा मानो उसका समाधान हो गया हो। इस अधिनियम के तहत जांच करने पर कि किशोर ने अपराध किया है।“

धारा 3 और 26 में अंतर्निहित विधायी आशय अधिनियम की प्रस्तावना, उद्देश्य और उद्देश्य स्पष्ट रूप से स्पष्ट हैं। अधिनियम की धाराओं, प्रस्तावना, उद्देश्यों और उद्देश्यों के संयुक्त पठन से कोई संदेह नहीं रहता है कि विधायिका का उद्देश्य उपेक्षित या अपराधी किशोरों को संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास प्रदान करना और उसके लिए न्यायनिर्णयन प्रदान करना है। अधिनियम की धारा 3 और 26 की व्याख्या अब पुन: एकीकृत नहीं है। 1986 के अधिनियम की धारा 3 और 26 जैसा कि ऊपर उद्धृत किया गया है, राजस्थान बाल अधिनियम, 1970 की धारा 3 और 26 के समतुल्य है। (1970 का राजस्थान अधिनियम 16)। उमेश चंद्रा में इस अदालत की तीन न्यायाधीशों की पीठ (ऊपर) ने राजस्थान अधिनियम की प्रस्तावना, उद्देश्य और उद्देश्यों और धारा 3 और 26 पर विचार करने के बाद, यह माना कि अधिनियम सामाजिक कानून का एक हिस्सा है। उन किशोरों की सुरक्षा के लिए है जो आपराधिक अपराध करते हैं और इसलिए, ऐसे उपबंधों का उदारतापूर्वक और अर्थपूर्ण अर्थ लगाया जाना चाहिए ताकि अधिनियम के उद्देश्य को आगे बढ़ाया जा सके। इस न्यायालय ने कंडिका 28 में 210 एसीसीसी में कहा।

"28. अधिनियम की सामान्य प्रयोज्यता के संबंध में, हम स्पष्ट रूप से विचार करते हैं कि अधिनियम की प्रयोज्यता के लिए प्रासंगिक तारीख वह तारीख है जिस पर अपराध होता है। बाल अधिनियम छोटे बच्चों को उनके आपराधिक कृत्यों के परिणामों से बचाने के लिए अधिनियमित किया गया था, इस आधार पर कि उस उम्र में उनके दिमाग को एक वयस्क के मामले में मेन्स रिया लगाने के लिए परिपक्व नहीं कहा जा सकता था। चूंकि यह अधिनियम का आशय है, इसलिए एक स्पष्ट निष्कर्ष दर्ज किया जाना चाहिए कि अधिनियम की प्रयोज्यता के लिए प्रासंगिक तारीख वह तारीख है जिस दिन अपराध होता है। यह बहुत संभव है कि जब तक मामला मुकदमे के लिए आता है, तब तक उम्र में बढ़ना एक अनैच्छिक कारक होता है, बच्चा हो सकता है अब बच्चा नहीं रह गया। इसलिए, धारा 3 और 26 आवश्यक है। दोनों खंड स्पष्ट रूप से इस दिशा में इशारा करते हैं। अधिनियम की प्रयोज्यता के लिए प्रासंगिक तारीख के रूप में घटना। हमारा स्पष्ट मत है कि जहां तक अभियुक्त, जो बालक होने का दावा करता है, की आयु का संबंध है, अधिनियम के प्रयोज्यता के लिए संगत तारीख घटना की तारीख है न कि विचारण की तारीख।"

(जोर दिया गया)

जैसा कि पहले ही तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिए गए निर्णय पर ध्यान दिया गया है

अर्नित दास (ऊपर) मामले में। इस न्यायालय की दो न्यायाधीशों की पीठ ने उमेश चंद्र (ऊपर) पर ध्यान नहीं दिया। हमारा स्पष्ट रूप से विचार है कि उमेश चंद्र (ऊपर) में निर्धारित सही कानून है और अर्नित दास (ऊपर) में इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिए गए निर्णय को एक अच्छा कानून निर्धारित करने के लिए नहीं कहा जा सकता है। हम, तदनुसार, मानते हैं कि कानून निर्धारित किया गया है। उमेश चंद्र (ऊपर) मामले में इस अदालत की तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा बनाया गया कानून सही कानून है।

प्रश्न संख्या. (ख):

क्या 2000 का अधिनियम उस मामले में लागू होगा जब कार्यवाही 1986 अधिनियम के तहत शुरू की गई है और लंबित है जब 2000 का अधिनियम 1.4.2001 से प्रभावी था।

इस मुद्दे पर, हमने विद्वान वरिष्ठ वकील श्री पी.एस.मिश्रा को सुना है अपीलकर्ता के लिए, सुश्री महारुख अदनवाला, हस्तक्षेपकर्ता के वकील और श्री अमरेंद्र शरण, विद्वान ए.एस.जी. झारखंड राज्य के लिए हैं। वास्तव में हस्तक्षेप करने वाले के वकील ने श्री मिश्रा के तर्कों को अपनाया है। श्री मिश्रा प्रस्तुत करेंगे कि 1986 अधिनियम के तहत लंबित किसी भी व्यक्ति के खिलाफ कोई भी कार्यवाही 2000 अधिनियम द्वारा कवर की जाएगी और 2000 अधिनियम के तहत परिभाषित किशोर होने का लाभ प्रदान करेगी, यदि अपराध होते समय वह 18 वर्ष से कम आयु का था। अपनी बात को पुष्ट करने के लिए वकील ने केन्द्र सरकार द्वारा बनाए गए अधिनियम और नियम 61 और 62 को लागू किया गया है। प्रतिवादी के वकील श्री शरण का तर्क है कि 1986 अधिनियम को 2000 अधिनियम की धारा 69 (1) द्वारा निरस्त कर दिया गया है और इसलिए, 2000 अधिनियम के प्रावधानों को 1986 अधिनियम के प्रावधानों के तहत शुरू किए गए और लंबित मामले/जांच तक विस्तारित नहीं किया जाएगा, 2000 का अधिनियम पूर्वव्यापी नहीं है।

उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर देने के लिए, 2000 अधिनियम की परिभाषाओं और धाराओं का त्वरित सर्वेक्षण करना आवश्यक होगा, जो मामले को निपटाने के उद्देश्य से प्रासंगिक है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है, अधिनियमों का संपूर्ण उद्देश्य किशोरों की देखभाल, संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास के लिए प्रदान करना है। अधिनियम परोपकारी कानून होने के नाते, एक व्याख्या दी जानी चाहिए जो कानून के कारण को आगे बढ़ाएगी यानी किशोरों को लाभ देगी।

1986 का अधिनियम तब तक मैदान में था जब तक कि इसे उद्भव द्वारा ग्रहण नहीं किया गया था अधिनियम की धारा 1 की उपधारा (3) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए केंद्र सरकार द्वारा जारी आधिकारिक राजपत्र में दिनांक 28.2.2001 की अधिसूचना द्वारा उक्त अधिनियम के लागू होने की तारीख 1.4.2001 से 2000 अधिनियम की धारा 69 (1) ने 1986 के अधिनियम को निरस्त कर दिया। यह इस प्रकार है:

69. निरसन और बचत - 1) किशोर न्याय अधिनियम, 1986 (1986 का 53) एतद्द्वारा निरसित किया जाता है।

(2) ऐसे निरसन के होते हुए भी, उक्त अधिनियम के अधीन की गई कोई बात या की गई कोई कार्रवाई इस अधिनियम के संगत प्रावधान के अधीन की गई या की गई समझी जाएगी। (महत्त्व दिया गया)

उप धारा (2) में कहा गया है कि 1986 अधिनियम के तहत की गई कोई भी चीज या की गई कोई कार्रवाई 2000 अधिनियम के संबंधित प्रावधानों के तहत की गई या की गई मानी जाएगी। इस प्रकार, हालांकि 1986 अधिनियम को 2000 अधिनियम द्वारा निरस्त कर दिया गया था, 1986 अधिनियम के तहत की गई कोई भी चीज या की गई कोई भी कार्रवाई उपधारा (2) द्वारा बचाई जाती है, जैसे कि कार्रवाई 2000 अधिनियम के प्रावधानों के तहत की गई हो।

धारा 20 जिस पर अपीलकर्ता के वकील द्वारा भारी भरोसा किया गया है, लंबित मामलों के संबंध में विशेष प्रावधान से संबंधित है। यह इस प्रकार है :

"20. लंबित मामलों के संबंध में विशेष उपबंध। इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, किसी क्षेत्र के किसी न्यायालय में उस तारीख को, जिस तारीख को यह अधिनियम उस क्षेत्र में प्रवृत्त होता है, किसी किशोर के संबंध में लंबित सभी कार्यवाहियां उस न्यायालय में इस प्रकार जारी रहेंगी मानो यह अधिनियम पारित नहीं किया गया था और यदि न्यायालय यह पाता है कि किशोर ने अपराध करने के बाद, यह ऐसे निष्कर्ष को अभिलिखित करेगा और किशोर के संबंध में कोई दंडादेश पारित करने के स्थान पर किशोर को बोर्ड को अग्रेसित करेगा जो इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार उस किशोर के संबंध में आदेश पारित करेगा मानो इस अधिनियम के अधीन जांच करने पर उसका समाधान हो गया हो कि किसी किशोर ने अपराध किया है।“

1986 के अधिनियम और 2000 के अधिनियम के बीच बुनियादी अंतर है किशोर की परिभाषा के संबंध में। 1986 के अधिनियम की धारा 2(ज) एक किशोर को निम्नानुसार परिभाषित करती है।

"2(ज) "किशोर" से ऐसा लड़का अभिप्रेत है जिसकी आयु सोलह वर्ष की नहीं है या ऐसी लड़की जिसने अठारह वर्ष की आयु प्राप्त नहीं की है;

2000 अधिनियम की धारा 2 (ट) किशोर को निम्नानुसार परिभाषित करती है: -

"2(ट) "किशोर" या "बालक" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसने अठारहवां वर्ष पूरा नहीं किया है;"

इस प्रकार, 1986 के अधिनियम और 2000 के अधिनियम के बीच उल्लेखनीय अंतर यह है कि 1986 के अधिनियम के तहत एक किशोर का अर्थ है एक पुरुष किशोर जिसने 16 वर्ष की आयु प्राप्त नहीं की है और एक महिला किशोर जिसने 18 वर्ष की आयु प्राप्त नहीं की है। 2000 के अधिनियम में पुरुष और महिला किशोर के बीच कोई अंतर नहीं किया गया है। 1986 के अधिनियम में 16 वर्ष की सीमा को 2000 अधिनियम में बढ़ाकर 18 वर्ष कर दिया गया है। 2000 के अधिनियम में जहां भी किशोर शब्द दिखाई देता है, उसका अर्थ अब उस व्यक्ति से लिया जाएगा जिसने 18 वर्ष की आयु पूरी नहीं की है।

धारा 3 निम्नानुसार प्रदान करता है:

"3. किशोर के संबंध में जांच जारी रखना जो किशोर नहीं रह गया है। - जहां कानून के साथ संघर्ष में एक किशोर या देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चे के खिलाफ जांच शुरू की गई है और ऐसी जांच के दौरान किशोर या बालक ऐसा नहीं रह जाता है, तो इस अधिनियम में या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, जांच जारी रखी जा सकेगी और ऐसे व्यक्ति के संबंध में आदेश ऐसे किए जा सकेंगे मानो वह व्यक्ति किशोर या बालक बना रहा हो।

इस प्रकार, यहां तक कि जहां एक जांच शुरू की गई है और किशोर किशोर नहीं रह जाता है यानी 18 वर्ष की आयु पार कर लेता है, जांच जारी रखी जानी चाहिए और ऐसे व्यक्ति के संबंध में आदेश दिए जाने चाहिए जैसे कि ऐसा व्यक्ति किशोर बना हुआ था।

इसी प्रकार, धारा 64 के अंतर्गत जहां किशोर को सजा भुगतनी पड़ रही है 2000 अधिनियम के प्रारंभ में कारावास की सजा के बदले में, उसे एक विशेष घर में भेजा जाएगा या एक उपुक्त संस्थान में रखा जाएगा। इन प्रावधानों से पता चलता है कि उन मामलों में भी जहां केवल जांच शुरू हो गई है या यहां तक कि जहां एक किशोर को सजा सुनाई गई है, 2000 अधिनियम के प्रावधान लागू होंगे। इसलिए, धारा 20 की सराहना की जानी चाहिए पूर्वोक्त प्रावधानों का विरोधाभास के संबध में।

अधिनियम की धारा 20, जैसा कि ऊपर उद्धृत किया गया है, लंबित मामलों के संबंध में विशेष प्रावधान से संबंधित है और नॉन-ऑब्सटेन्टे खंड से शुरू होती है। वाक्य "इस

अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, किसी भी क्षेत्र में किसी भी न्यायालय में लंबित किशोर के संबंध में सभी कार्यवाहियां, जिस तारीख को यह अधिनियम लागू हो सकता है" का बहुत महत्व है। अधिनियम की धारा 20 में उल्लिखित किसी न्यायालय में लंबित किशोर के संबंध में कार्यवाहियां वर्ष 2000 के अधिनियम के लागू होने से पहले शुरू की गई कार्यवाहियों से संबंधित हैं और जो वर्ष 2000 के अधिनियम के लागू होने के समय लंबित हैं। "किसी भी अदालत" शब्द में साधारण आपराधिक अदालतें भी शामिल होंगी। यदि व्यक्ति 1986 के अधिनियम के तहत "किशोर" था, तो कार्यवाही आपराधिक अदालतों में लंबित नहीं होगी। वे आपराधिक अदालतों में तभी लंबित होंगे जब लड़का 16 साल पार कर चुका हो या लड़की 18 साल पार कर चुकी हो। इससे पता चलता है कि धारा 20 उन मामलों को संदर्भित करती है जहां एक व्यक्ति 1986 अधिनियम के तहत किशोर नहीं रह गया था, लेकिन अभी तक 18 वर्ष की आयु पार नहीं की थी, तो लंबित मामला उस न्यायालय में जारी रहेगा जैसे कि 2000 अधिनियम पारित नहीं किया गया है और यदि न्यायालय पाता है कि किशोर ने अपराध किया है, यह इस तरह के निष्कर्ष को रिकॉर्ड करेगा और किशोर के संबंध में कोई सजा पारित करने के बजाय, किशोर को बोर्ड जो उस किशोर के संबंध में आदेश पारित करेगा।

इस संबंध में यह ध्यान रखना उचित है कि 2000 अधिनियम की धारा 16 1986 अधिनियम की धारा 22 के समान है। इसी प्रकार 2000 की धारा 15 यह अधिनियम 1986 के अधिनियम की धारा 21 के समरूप है। इस प्रकार, इस तरह की व्याख्या भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 (1) का उल्लंघन नहीं करती है और किशोर को 1986 के अधिनियम के तहत उस पर लगाए गए दंड से अधिक दंड नहीं दिया जा सकता है।

श्री मिश्रा ने केंद्र सरकार द्वारा बनाए गए नियम 61 और 62 पर भरोसा किया। उनके अनुसार, विशेष रूप से नियमों के नियम 62 में लंबित मामलों को शामिल किया गया है और अपीलकर्ता नियम 62 के लाभ का हकदार है। नियम 62 इस प्रकार है ।

"62. लंबित मामले- (1). विधि का उल्लंघन करने वाले किसी किशोर या बालक को अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों के लाभों से वंचित नहीं किया जाएगा।

(2). ऐसे सभी लंबित मामले जो प्राप्त नहीं हुए हैं, उन्हें अधिनियम के उपबंधों तथा उसके अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार अंतिम रूप से निपटाया जाएगा।

(3). कानून के साथ संघर्ष में कोई भी किशोर/बच्चा को उप-नियम (I) के तहत लाभ दिया जायेगा और यह स्पष्ट किया जाता है कि इस तरह के लाभ न केवल उन अभियुक्तों को उपलब्ध कराए जाएंगे जो अपराध किए जाने के समय किशोर या बच्चा थे, बल्कि उन लोगों को भी उपलब्ध कराए जाएंगे जो किसी भी जांच या परीक्षण के लंबित रहने के दौरान किशोर या बच्चा नहीं रह गए थे।

(4) विधि के साथ संघर्ष में किशोर या बालक के निरोध की अवधि की गणना करते समय, ऐसी सभी अवधि, जो किशोर या बालक ने अभिरक्षा में पहले ही बिताई है, निरोध स्थगन को सक्षम प्राधिकारी के अंतिम आदेश में अंतवष्ट प्रवास या निरोध की अवधि के भाग के रूप में गिना जाएगा।

यह नियम यह भी इंगित करता है कि विधायिका का इरादा यह था कि 2000 अधिनियम के प्रावधान 1.4.2001 को प्रदान किए गए लंबित मामलों पर लागू होने थे, अर्थात जिस तारीख को 2000 अधिनियम लागू हुआ था, वह व्यक्ति 2000 अधिनियम में परिभाषित शब्द के अर्थ के भीतर "किशोर" था अर्थात उसने 18 वर्ष की आयु पार नहीं की थी।

श्री मिश्रा ने इसके बारे में दो न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय का उल्लेख किया 2003 की आपराधिक अपील संख्या 370 में न्यायालय ने मामले में 31.3.2004 को फैसला सुनाया उपेंद्र कुमार बनाम बिहार राज्य, जिसमें इस न्यायालय ने भोला भगत बनाम भारत संघ मामले में दिए गए इस न्यायालय के पहले के फैसले बिहार राज्य, [1997] 8 एससीसी 720, गोपीनाथ घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1984] अनुपूरक. एससीसी 228, भूप राम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1989] 3 एससीसी और प्रदीप कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [1995] अनुपूरक. 4 एससीसी 419 जहां यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि किशोर होने वाले अभियुक्तों को प्रावधानों के लाभ से वंचित नहीं किया जा सकता है उस समय लागू अधिनियम का इसलिए, हम मानते हैं कि 2000 अधिनियम के प्रावधान लागू होंगे। उन मामलों के लिए जो 1986 के अधिनियम के तहत किए गए अपराधों के लिए शुरू किए गए और विचारण/जांच के लिए लंबित हैं, बशर्ते कि व्यक्ति ने 18 वर्ष की आयु पूरी नहीं की हो 1.4.2001 को।

शुद्ध परिणाम यह है:

(क). किशोर की आयु के निर्धारण की गणना की तारीख अपराध की तारीख है न कि वह तारीख जब उसे प्राधिकरण या न्यायालय के समक्ष पेश किया जाता है।

(ख). 2000 का अधिनियम 1986 अधिनियम के तहत शुरू किए गए किसी भी न्यायालय/प्राधिकरण में लंबित कार्यवाही में लागू होगा और 2000 अधिनियम के लागू होने के समय लंबित है और व्यक्ति ने 1986 के अधिनियम के तहत शुरू नहीं किया था। दिनांक 1-4-2001 की स्थिति के अनुसार 18 वर्ष की आयु पूरी कर ली है।

अपील का निपटान उपर्युक्त शर्तों के साथ किया जाता है।

एस.बी. सिन्हा, न्यायमूर्ति. परिचय :

किशोर न्याय अधिनियम को इसके वर्तमान स्वरूप में लागू किया गया है। किशोर न्याय प्रशासन के लिए संयुक्त राष्ट्रीय मानक न्यूनतम नियम, 1985 का पालन करने के लिए हमारे देश के दायित्व है, जिसे बीजिंग नियम (नियम) के रूप में भी जाना जाता है।

नियम:

उक्त नियमावली के भाग-I में सामान्य सिद्धांतों का प्रावधान है जिन्हें मौलिक परिपे्रक्ष्य का कहा गया है जिनमें सामान्य रूप से व्यापक सामाजिक नीति का उल्लेख किया गया है और जिसका उद्देश्य किशोर कल्याण को अधिकतम संभव सीमा तक बढ़ावा देना है, जिससे किशोर न्याय प्रणाली द्वारा हस्तक्षेप की आवश्यकता को न्यूनतम किया जा सकेगा और बदले में किसी हस्तक्षेप से होने वाली हानि में कमी आएगी। किशोर के लिए रचनात्मक सामाजिक नीति की महत्वपूर्ण भूमिका नियम 1.1 से 1.13 में बताई गई है किशोर अपराध और अपराध निवारण के मामले में अन्य बातों के साथ-साथ। नियम 1.4 किशोर न्याय को प्रत्येक देश की राष्ट्रीय विकास प्रक्रिया के एक अभिन्न अंग के रूप में परिभाषित करता है, सभी किशोरों से सामाजिक न्याय के व्यापक ढांचे के भीतर, और इस प्रकार, एक ही समय में, युवाओं की सुरक्षा और समाज में एक शांतिपूर्ण व्यवस्था के रखरखाव में योगदान देता है। जबकि नियम 16 में किशोर न्याय प्रणाली को व्यवस्थित रूप से विकसित और समन्वित किए जाने की आवश्यकता का उल्लेख किया गया है ताकि सेवाओं में शामिल कार्मिकों की क्षमता, जिसमें उनकी पद्धतियां, दृष्टिकोण और व्यव्हार शामिल हैं, में सुधार करने और बनाए रखने की दृष्टि से समन्वित किया जा रहा है, नियम I 5 सदस्य राज्यों में मौजूदा स्थितियों को ध्यान में रखता है जिसके कारण विशेष नियमों के कार्यान्वयन का तरीका अन्य राज्यों में अपनाए गए तरीके से आवश्यक रूप से भिन्न होगा। नियम 2.1 में किसी भी प्रकार के भेद के बिना नियमों को लागू करने का प्रावधान है। नियम 2.2 परिभाषाओं के लिए प्रदान करता है जो इस प्रकार हैं:

"(क) एक किशोर एक बच्चा या युवा व्यक्ति है, जिसे संबंधित कानूनी प्रणालियों के तहत, अपराध के लिए इस तरह से निपटाया जा सकता है जो एक वयस्क से अलग है;

(ख) एक अपराध कोई भी व्यवहार (कार्य या चूक) है जो संबंधित कानूनी प्रणालियों के तहत कानून द्वारा दंडनीय है;

(ग) किशोर अपराधी वह बालक या युवा व्यक्ति है जिस पर या जो अपराध करने के लिए पाया गया है।

नियम 23 में अन्य बातों के साथ-साथ कानूनों, नियमों और उपबंधों का एक सेट बनाने का प्रावधान है जो विशेष रूप से किशोर अपराधियों और उन संस्थाओं और निकायों पर लागू होते हैं जिन्हें किशोर अपराधियों के कार्य सौंपे गए हैं।

“(क). अपने मूल अधिकारों की रक्षा करते हुए किशोर अपराधियों की अलग-अलग जरूरतों को पूरा करता है;

(ख). समाज की जरूरतों को पूरा करने के लिए;

निम्नलिखित नियमों को पूरी तरह से और निष्पक्ष रूप से लागू करने के लिए।“

किशोर की आयु सदस्य देशों द्वारा इसकी कानूनी प्रणाली को ध्यान में रखते हुए निर्धारित की जानी है, इस प्रकार आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और कानूनी प्रणालियों का पूरी तरह से सम्मान किया जाता है। इसने "किशोर" की परिभाषा के तहत आने वाली उम्र की एक विस्तृत विविधता को 7 वर्ष से 18 वर्ष या उससे अधिक तक बना दिया है। नियम 3 में (क) स्थिति अपराधों को कवर करने वाले नियमों के विस्तार का प्रावधान है; (ख) किशोर कल्याण और देखभाल कार्यवाही और (ग) युवा वयस्क अपराधियों से निपटने की कार्यवाही, प्रत्येक दी गई आयु-सीमा के आधार पर। नियम 4 में प्रावधान है कि भावनात्मक, मानसिक और बौद्धिक परिपक्वता के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए आपराधिक जिम्मेदारी की न्यूनतम आयु बहुत कम आयु स्तर पर तय नहीं की जानी चाहिए। नियम 5 में प्रावधान है कि किशोर न्याय प्रणाली किशोर के कल्याण पर जोर देगी और यह सुनिश्चित करेगी कि किशोर अपराधियों के प्रति कोई भी प्रतिक्रिया हमेशा अपराधियों और अपराध दोनों की परिस्थितियों के अनुपात में होगी। नियम 6 में विवेक की गुंजाइश का प्रावधान है। नियम 7.1 किशोर के अधिकारों के लिए प्रदान करता है जो निम्नानुसार है:

"बुनियादी प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपायों जैसे कि बेगुनाही की धारणा, आरोपों के अधिसूचित होने का अधिकार, चुप रहने का अधिकार, वकील का अधिकार, माता-पिता या अभिभावक की उपस्थिति का अधिकार, गवाहों का सामना करने और जिरह करने का अधिकार और उच्च प्राधिकारी से अपील करने का अधिकार कार्यवाही के सभी चरणों में गारंटी दी जाएगी।“

नियम 8 में निजता के संरक्षण का प्रावधान है। नियम 9 में प्रावधान है कि उक्त नियमों की व्याख्या संयुक्त राष्ट्र द्वारा कैदियों के उपचार के लिए अपनाए गए मानक न्यूनतम नियमों और अन्य मानवाधिकार उपकरणों और मानकों द्वारा मान्यता प्राप्त के आवेदन को रोकने के रूप में नहीं की जाएगी। अंतर्राष्ट्रीय समुदाय जो युवाओं की देखभाल और संरक्षण से संबंधित है। नियम 27 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा अपनाए गए कैदियों का उपचार।

उक्त नियमों के भाग 2 में जांच और अभियोजन, विपथन, पुलिस में विशेषज्ञता प्राप्त करने, विचारण लंबित रहने तक नजरबंद रखने का प्रावधान है। नियम 13 निम्नानुसार इस प्रकार है :

"13.1 लंबित मुकदमे का उपयोग केवल अंतिम उपाय के उपाय के रूप में और कम से कम संभव अवधि के लिए किया जाएगा।

13.2 जब भी संभव हो, लंबित मुकदमे को वैकल्पिक उपायों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाएगा, जैसे कि निकट पर्यवेक्षण, गहन देखभाल या परिवार के साथ या शैक्षिक व्यवस्था या घर में।

13.3 निरोध के तहत किशोर लंबित परीक्षण सभी के हकदार होंगे। संयुक्त राष्ट्र द्वारा अपनाए गए कैदियों के उपचार के लिए मानक न्यूनतम नियमों के अधिकार और गारंटी।

13.4 हिरासत में लिए गए किशोरों को सुनवाई लंबित रहने तक अलग रखा जाएगा वयस्कों से और एक अलग संस्थान में या हिरासत में लिया जाएगा एक संस्था का अलग हिस्सा भी जो वयस्कों को रखता है।

13.5 हिरासत में रहते हुए, किशोरों को देखभाल, संरक्षण और सभी आवश्यक व्यक्तिगत सहायता प्राप्त होगी - सामाजिक, शैक्षिक, व्यावसायिक, मनोवैज्ञानिक, चिकित्सा और शारीरिक - जो उन्हें उनकी उम्र, लिंग और व्यक्तित्व को ध्यान में रखते हुए आवश्यकता हो सकती है।

पार्ट III में उन शर्तों के अनुसार न्यायनिर्णयन और निपटान का प्रावधान है जिनमें निर्धारित सक्षम प्राधिकारी न्यायनिर्णयन के लिए सक्षम थे। नियम 15 में कानूनी सलाह, माता-पिता और अभिभावकों का प्रावधान है। नियम 16 में सामाजिक जांच रिपोर्टों का प्रावधान है। नियम 16.1 निम्नानुसार इस प्रकार है :

"- छोटे अपराधों को छोड़कर सभी मामलों में, सक्षम प्राधिकारी द्वारा सजा सुनाए जाने से पहले अंतिम निर्णय देने से पहले, किशोर जिन पृष्ठभूमि और परिस्थितियों में रह रहा है या जिन परिस्थितियों में अपराध किया गया है, उनकी उचित जांच की जाएगी ताकि सक्षम प्राधिकारी द्वारा जी मामले के विवेकपूर्ण निर्णय को सुविधाजनक बनाया जा सके।

नियम 17 अधिनिर्णय और स्वभाव में मार्गदर्शक सिद्धांतों का प्रावधान करता है जो निम्नानुसार है:

"17.1 सक्षम प्राधिकारी का स्वभाव निम्न द्वारा निर्देशित किया जाएगा निम्नलिखित सिद्धांत:

(क). की गई प्रतिक्रिया हमेशा न केवल परिस्थितियों और अपराध की गंभीरता के अनुपात में होगी बल्कि परिस्थितियों और किशोर की जरूरतों के साथ-साथ समाज की जरूरतों के अनुपात में भी होगी;

(ख). किशोर की व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर प्रतिबंध सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद ही लगाए जाएंगे और इसे संभावित न्यूनतम तक सीमित किया जाएगा;

(ग) व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित तब तक नहीं लगाया जाएगा जब तक कि किशोर को किसी अन्य व्यक्ति के खिलाफ हिंसा या अन्य गंभीर अपराधों को करने में दृढ़ता से जुड़े गंभीर कार्य का निर्णय नहीं दिया जाता है और जब तक कि कोई अन्य उचित प्रतिक्रिया नहीं होती है;

(घ). किशोर का कल्याण उसके या उसके मामले पर विचार करने में मार्गदर्शक कारक होगा।

17.2 किशोरों द्वारा किए गए किसी भी अपराध के लिए मृत्युदंड नहीं दिया जाएगा:

17.3 किशोर शारीरिक दंड के अधीन नहीं होंगे।

17.4 सक्षम प्राधिकारी के पास किसी भी समय कार्यवाही को बंद करने की शक्ति होगी।

यह इंगित किया गया है कि युवा व्यक्तियों के निर्णय के लिए दिशा-निर्देश तैयार करने में मुख्य कठिनाई इस तथ्य से उपजी है कि दार्शनिक प्रकृति के अनसुलझे संघर्ष हैं, जैसे कि निम्नलिखितः
(क़) पुनर्वास बनाम न्यायसंगत परिणाम;

(ख) सहायता बनाम दमन और सजा;

(ग). एक व्यक्तिगत मामले के एकल गुणों के अनुसार प्रतिक्रिया बनाम सामान्य रूप से समाज के संरक्षण के अनुसार प्रतिक्रिया;

(ड) सामान्य प्रतिरोध बनाम व्यक्तिगत अक्षमता।

किशोर न्याय विधान के उद्देश्य:

किशोर न्याय विधान का उद्देश्य उन बच्चों को सहायता प्रदान करना है जिन्हें बालिग अपराधियों के साथ कैद किया जा रहा था और जिन्हें अधीन किया गया था विभिन्न शोषण के लिए। यह चीजों की सुव्यवस्था में होगा कि कानून के उद्देश्य और उद्देश्य की सराहना को स्पष्ट समझ के साथ देखा जाता है। जिसने किशोर अपराधियों को राहत देने की मांग की। किशोर न्याय की समस्या, निस्संदेह, दुखद हित में से एक है, वास्तव में यह केवल इस देश तक ही सीमित नहीं है, बल्कि राष्ट्रीय सीमाओं से परे है। 1966 में लंदन में अपराधियों के अपराध और उपचार की रोकथाम पर दूसरी संयुक्त राष्ट्र कांग्रेस में इस मुद्दे पर चर्चा की गई और कई चिकित्सीय सिफारिशों को अपनाया गया। किशोर न्याय के प्रशासन के लिए संयुक्त राष्ट्र मानक न्यूनतम नियम के अनुरूप देश में किशोर न्याय प्रणाली के संचालन को लाने के लिए, किशोर न्याय अधिनियम 1986 में अस्तित्व में आया। तत्कालीन विद्यमान अधिनियमों के राज्य और संसदीय दोनों के कार्यकरण की समीक्षा से यह संकेत मिलेगा कि उन बच्चों पर अधिक ध्यान दिया जाना आवश्यक पाया गया जो सामाजिक कुसमायोजन, अपराध या उपेक्षा की स्थितियों में पाए जा सकते हैं। वयस्कों के लिए उपलब्ध न्याय प्रणाली

को किशोरों पर लागू करने के लिए उपयुक्त नहीं माना जा सकता है। ऐसे किशोरों के संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास के मामले में अनौपचारिक प्रणाली और समुदाय आधारित कल्याण एजेंसियों की बड़ी भागीदारी की भी आवश्यकता है।

किशोर न्याय अधिनियम, 1986 के प्रावधान (इसके बाद किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 (2000 का 56) (जिसे इसके पश्चात् 2000 अधिनियम कहा गया है) का उपर्युक्त न्यूनतम मानकों को ध्यान में रखते हुए यह अर्थ लगाया जाना अपेक्षित है क्योंकि इनका विशेष रूप से उल्लेख किया गया है।

किशोर न्याय अधिनियम, 1986 का उद्देश्य निम्नलिखित उद्देश्यों को प्राप्त करना है।

(i). देश में किशोर न्याय के लिए एक समान कानूनी ढांचा तैयार करना ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि किसी भी परिस्थिति में कोई भी बच्चा जेल या पुलिस लॉक-अप में बंद न हो। यह किशोर कल्याण बोर्डों और किशोर न्यायालयों की स्थापना करके सुनिश्चित किया जा रहा है;

(ii). सामाजिक कुसमायोजन की किसी भी स्थिति में पाए जाने वाले बच्चे की विकास आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अपनी पूरी श्रृंखला में किशोर अपराध की रोकथाम और उपचार के लिए एक विशेष दृष्टिकोण प्रदान करना;

(iii). किशोर न्याय प्रणाली के दायरे में आने वाले बच्चों की विभिन्न श्रेणियों के मामले, संरक्षण, उपचार, विकास और पुनर्वास के लिए अपेक्षित मशीनरी और अवसंरचना का उल्लेख करना। इसे पर्यवेक्षण गृहों, उपेक्षित किशोरों के लिए किशोर गृहों और अपराधी किशोरों के लिए विशेष गृहों की स्थापना करके प्राप्त करने का प्रस्ताव है;

(iv). किशोर प्रशासन के लिए मानदंड और मानक स्थापित करना। जांच और अभियोजन, अधिनिर्णय और स्वभाव और मामले, उपचार और पुनर्वास के संदर्भ में न्याय;

(v). किशोर न्याय की औपचारिक प्रणाली और उपेक्षित या समाज के कुसमायोजित बच्चों के कल्याण में लगी स्वैच्छिक एजेंसियों के बीच उचित संबंध और समन्वय विकसित करना और विशेष रूप से उनकी जिम्मेदारियों और भूमिकाओं के क्षेत्रों को परिभाषित करना;

(vi). किशोरों के संबंध में विशेष अपराधों का गठन करना और उनके लिए सजा का प्रावधान करना;

(vii). किशोर न्याय के प्रशासन के लिए संयुक्त राष्ट्र मानक न्यूनतम नियमों के अनुरूप देश में किशोर न्याय प्रणाली के संचालन को लाने के लिए।

1986 के अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों में देश में एक समान किशोर न्याय प्रणाली की एक योजना का प्रावधान है ताकि किसी किशोर को जेल या पुलिस हवालात में न डालना पड़े और साथ ही देखभाल, संरक्षण आदि के लिए किशोर अपराध की रोकथाम और उपचार किया जा सके। धारा 3 में यह प्रावधान है कि जहां किसी किशोर के विरुद्ध जांच शुरू की गई है, यहां तक कि ऐसी जांच के दौरान भी किशोर ऐसा नहीं रह गया है, तो उसमें अंतवष्ट किसी बात के होते हुए भी या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के होते हुए भी, जांच जारी रखी जा सकेगी और ऐसे व्यक्तियों के संबंध में आदेश दिए जा सकेंगे जैसे कि वह व्यक्ति किशोर बना हुआ था। अधिनियम के अध्याय II में किशोरों के लिए सक्षम प्राधिकरणों और संस्थानों जैसे किशोर कल्याण बोर्ड, किशोर न्यायालय, किशोर गृह, विशेष गृह, पर्यवेक्षण गृह और पश्च देखभाल संगठनों की बात की गई है। अध्याय III में उपेक्षित किशोरों के लिए प्रावधान किया गया है। धारा 17 बेकाबू किशोरों के लिए प्रावधान करती है। अध्याय IV अपराधी किशोरों से संबंधित है। धारा 18 से 26 में जमानती या गैर-जमानती अपराध के आरोपी किशोरों की जमानत और हिरासत, उनके साथ व्यवहार करने के तरीके और दोषी किशोरों के संबंध में या उनके खिलाफ पारित किए जाने वाले आदेशों का प्रावधान है। दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय VIII में यथा निर्धारित कार्यवाहियां किशोर के विरुद्ध सक्षम नहीं हैं। एक किशोर और एक व्यक्ति जो किशोर नहीं है, पर संयुक्त रूप से मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। किसी कानून के तहत किसी अपराध के लिए किशोर की दोषसिद्धि के साथ कोई अयोग्यता नहीं जुड़ी है। विशेष जी उपबंध धारा 26 में अंतवष्ट हैं जहां तक किशोरों के संबंध में कार्यवाहियों के संबंध में किसी न्यायालय में प्रवृत्त होने की तारीख को लंबित है। अध्याय V (धारा 27 से 40) अधिनियम के तहत आम तौर पर सक्षम अधिकारियों की प्रक्रिया निर्धारित करता है और ऐसे अधिकारियों के आदेशों से अपील और संशोधन करता है। अध्याय VI (धारा 41 से 45) किशोरों के संबंध में विशेष अपराधों का प्रावधान करता है। अध्याय VIL (धारा 46 से 63) में विविध हैं प्रावधान।

1986 के अधिनियम की धारा 32 सक्षम प्राधिकारी को उसके समक्ष लाए गए अपराधी की आयु की जांच करने का आदेश देती है।

1986 के अधिनियम को निरस्त कर दिया गया है और 2000 के अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है।

2000 के अधिनियम में 1986 के अधिनियम की तुलना में कुछ बदलाव किए गए हैं। इसने एक पुरुष किशोर और महिला किशोर के बीच के अंतर को मिटा दिया है। 1986 के अधिनियम में अपराधी किशोर की परिभाषा के विपरीत, जिसे अपराध करने का दोषी पाया गया था, कानून के साथ संघर्ष में एक किशोर को 2000 के अधिनियम में एक ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया गया है जो 18 वर्ष से कम आयु के व्यक्ति का है और उस पर अपराध करने का आरोप है। एक अपराध। धारा 3 में किशोर के संबंध में जांच जारी रखने का प्रावधान है जो किशोर नहीं रह गया है।

उपर्युक्त प्रावधानों के कारण एक किशोर के साथ एक कानूनी कल्पना बनाई गई है जो एक व्यक्ति के रूप में किशोर नहीं रह गया है जैसे कि वह किशोर बना हुआ था। अध्याय 2 में किशोर न्याय बोर्ड। इसकी शक्ति को धारा 6 में रेखांकित किया गया था। धारा 7 में कहा गया है कि एक मजिस्ट्रेट, जिसके समक्ष एक किशोर को पेश किया जाता है, को बिना किसी देरी के अपनी राय दर्ज करनी चाहिए, और यदि यह पाया जाता है कि उसके सामने लाया गया व्यक्ति किशोर है, तो वह उसे रिकॉर्ड करेगा और उसे कार्यवाही के रिकॉर्ड के साथ कार्यवाही पर अधिकार क्षेत्र रखने वाले सक्षम प्राधिकारी को अग्रेषित करेगा। धारा 8 और 9 में अवलोकन गृहों और विशेष घरों का प्रावधान है। धारा 10 में प्रावधान है कि कानून के उल्लंघन में किशोर की गिरफ्तारी पर; उसे एक विशेष किशोर पुलिस इकाई या नामित पुलिस अधिकारी के प्रभार में रखा जाएगा जो तुरंत बोर्ड के सदस्य को मामले की रिपोर्ट करेगा। धारा 12 में जमानत का प्रावधान है। किसी भी परिस्थिति में, जो व्यक्ति किशोर प्रतीत होता है, उसे पुलिस लॉक-अप में रखा जाना चाहिए। उसे निर्धारित तरीके से एक निरीक्षण गृह में रखा जाना है जब तक कि उसे अदालत के सामने नहीं लाया जा सकता है। धारा 12 की उप-धारा (3) बोर्ड को एक किशोर को जेल भेजने के बजाय उसे अवलोकन गृह भेजने का आदेश देने का आदेश देती है। धारा 14 में चार महीने की अवधि के भीतर किशोर के संबंध में बोर्ड द्वारा जांच करने का प्रावधान है। धारा 15 एक आदेश के लिए प्रदान करता है जो किशोर के संबंध में पारित किया जा सकता है, उप-धारा (I) के खंड (छ) जिसमें से इस प्रकार है , इस प्रकार:

'15. किशोर के संबंध में पारित किया जा सकने वाला आदेश- (I) जहां बोर्ड का जांच करने पर समाधान हो जाता है कि किसी किशोर ने कोई अपराध किया है, तब, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अन्तर्विष्ट किसी विपरीत बात के होते हुए भी, बोर्ड, यदि वह ऐसा उचित समझे, -

(छ) किशोर को विशेष गृह भेजने का निदेश देने वाला आदेश देना-

(i). किशोर के मामले में, सत्रह वर्ष से अधिक लेकिन अठारह वर्ष से कम आयु के लिए दो वर्ष से कम की अवधि के लिए;

(ii). किसी अन्य किशोर के मामले में उस अवधि के लिए जब तक वह किशोर नहीं रह जाता:

परन्तु यदि बोर्ड का यह समाधान हो जाता है कि अपराध की प्रकृति और मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए ऐसा करना समीचीन है, तो अभिलिखित किए जाने वाले कारणों के लिए, स्थगन की अवधि को ऐसी अवधि तक घटा सकेगा जो वह ठीक समझे।

धारा 16 में कहा गया है कि किसी भी किशोर को मृत्युदंड या आजीवन कारावास की सजा नहीं दी जाएगी या जुर्माना अदा न करने या सुरक्षा प्रदान करने में चूक करने पर जेल में नहीं डाला जाएगा। धारा 20 और 64 जो हमारे उद्देश्य के लिए प्रासंगिक हैं, निम्नानुसार पढ़ें:

"20. लंबित मामलों के संबंध में विशेष उपबंध--इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, किसी क्षेत्र के किसी न्यायालय में उस तारीख को, जिस तारीख को यह अधिनियम उस क्षेत्र में प्रवृत्त होता है, किसी किशोर के संबंध में सभी कार्यवाहियां उस न्यायालय में इस प्रकार जारी रहेंगी मानो यह अधिनियम पारित नहीं किया गया था और यदि न्यायालय पाता है कि किशोर ने कोई अपराध किया है, यह इस तरह के निष्कर्ष को रिकॉर्ड करेगा और किशोर के संबंध में कोई सजा पारित करने के बजाय, किशोर को बोर्ड को अग्रेषित करेगा जो इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार उस किशोर के संबंध में आदेश पारित करेगा जैसे कि इस अधिनियम के तहत जांच पर यह संतुष्ट हो गया था कि एक किशोर ने अपराध किया है।

64. इस अधिनियम के प्रारंभ पर सजा भुगत रहे कानून के साथ संघर्ष में किशोर - किसी भी क्षेत्र में जिसमें यह अधिनियम लागू किया गया है, राज्य सरकार या पर्यावरण प्राधिकरण निर्देश दे सकता है कि कानून के साथ संघर्ष में एक किशोर जो इस अधिनियम के प्रारंभ पर कारावास की किसी भी सजा को भुगत रहा है, इस तरह की सजा भुगतने के बदले में, किसी विशेष गृह में भेजा जाए या राज्य सरकार या स्थानीय के रूप में इस तरह से उपयुक्त संस्थान में रखा जाए जो प्राधिकरण सजा की शेष अवधि के लिए उपयुक्त सोचता है; और

इस अधिनियम के उपबंध किशोर पर लागू होंगे जैसे कि बोर्ड द्वारा उसे ऐसे विशेष गृह या संस्था में भेजने का आदेश दिया गया था या, जैसा भी मामला हो, इस अधिनियम की धारा 16 की उपधारा (2) के तहत सुरक्षात्मक देखभाल के तहत रखने का आदेश दिया गया था।

धारा 4 से 28 अध्याय II में आती है जो कानून के साथ संघर्ष में किशोर से संबंधित है और धारा 64 अध्याय V में विविध प्रावधानों से संबंधित है। यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि अध्याय II या धारा 20 में होने वाले सभी प्रावधान कानून के साथ संघर्ष में किशोर अभिव्यक्ति का उपयोग नहीं करते हैं जबकि धारा 64 विशेष रूप से उस अभिव्यक्ति का उपयोग करती है।

अधिनियम की धारा 20 किसी भी क्षेत्र में किसी किशोर न्यायालय की कार्यवाही को उस तारीख को जारी रखने की अनुमति देती है जिस तारीख को अधिनियम लागू हुआ था, यह प्रावधान करते हुए कि "यह इस तरह के निष्कर्ष को रिकॉर्ड करेगा और उस किशोर के संबंध में कोई सजा पारित करने के बजाय, उसे बोर्ड को अग्रेषित करेगा जो इस अधिनियम के प्रावधान के अनुसार उस किशोर के संबंध में आदेश पारित करेगा जैसे कि वह इस अधिनियम के प्रावधान के अनुसार उस किशोर के संबंध में आदेश पारित करेगा जैसे कि वह उस पर संतुष्ट हो गया हो। इस अधिनियम के तहत जांच कि किशोर ने अपराध किया था।

धारा 68 में राज्य सरकार की नियम बनाने की शक्ति का प्रावधान है। दुर्भाग्यवश, किसी भी राज्य ने इस संबंध में कोई नियम नहीं बनाया है। तथापि, केन्द्र सरकार ने अधिनियम की धारा 70 घ के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए उन सिद्धांतों को प्रकाशित किया जो कार्यनीतियों के विकास, वर्ष 2000 के अधिनियम की व्याख्या और कार्यान्वयन तथा मॉडल नियमों के लिए मूलभूत हैं जिन्हें राज्य सरकारों द्वारा बनाया जाना अपेक्षित है। नियम 61 में उक्त मॉडल नियम निम्नानुसार है:

"61. मॉडल नियमों का अस्थायी अनुप्रयोग - यह एतद्द्वारा घोषित किया जाता है कि जब तक अधिनियम की धारा 68 के तहत संबंधित राज्य सरकार द्वारा नए नियम बनाए नहीं जाते हैं, तब तक ये नियम उस राज्य में आवश्यक परिवर्तनों के साथ लागू होंगे।

नियम 62 लंबित मामलों से संबंधित है और उसका उपनियम (3) निम्नानुसार है: आदेश में कहा गया,

'यह स्पष्ट किया जाता है कि इस तरह के लाभ न केवल उन आरोपियों को उपलब्ध कराए जाएंगे जो अपराध होने के समय नाबालिग या बच्चे थे, बल्कि उन लोगों को भी उपलब्ध कराए जाएंगे जो मुकदमे की किसी भी जांच के लंबित रहने के दौरान किशोर या बच्चे नहीं रहे.'

किशोर न्याय से संबंधित विधान को किशोर न्याय की समस्या, जो राष्ट्रीय सीमाओं से परे है, की त्रासद मानवीय हित की समस्या के समाधान के लिए एक कदम के रूप देखा जाना जाना चाहिए। उक्त अधिनियम को न केवल नियमों के संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए बल्कि मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा और किशोरों के संरक्षण के लिए संयुक्त राष्ट्र मानक न्यूनतम नियमों के संदर्भ में भी पढ़ा जाना चाहिए।

अंतर्राष्ट्रीय कानून:

किशोर न्याय अधिनियम विशेष रूप से अंतरराष्ट्रीय कानून को संदर्भित करता है। नियमों के संगत प्रावधानों को इसमें शामिल किया गया है। अंतर्राष्ट्रीय ग्रंथ, अनुबंध और सम्मेलन हालांकि हमारे नगरपालिका कानून का हिस्सा नहीं हो सकते हैं, उन्हें अदालतों द्वारा संदर्भित किया जा सकता है और उनका पालन किया जा सकता है। तथ्य यह है कि भारत उक्त ग्रंथों का एक पक्षकार है। त्वरित सुनवाई का अधिकार कोई नया अधिकार नहीं है। यह हमारे संविधान में उसके अनुच्छेद 14 और 21 के अनुसार सन्निहित है। अंतर्राष्ट्रीय संधियां भी इसी को मान्यता देती हैं। अब यह स्पष्ट है कि मानवाधिकारों के किसी भी उल्लंघन को हेय दृष्टि से देखा जाएगा। अंतर्राष्ट्रीय कानून के कुछ प्रावधान हालांकि हमारे नगरपालिका कानून का हिस्सा नहीं हो सकते हैं, लेकिन अदालतें संविधान के संदर्भ में नए अधिकारों को खोजने के लिए इसे संदर्भित करने में संकोच नहीं करती हैं। भारत के संविधान और अन्य चल रहे कानूनों को अंतरराष्ट्रीय कानून के नियमों के साथ लगातार पढ़ा गया है। संविधान विधायी शक्ति का स्रोत है, न कि अभिनिर्धारित। अंतर्राष्ट्रीय कानून के सिद्धांत जब भी लागू होते हैं, एक वैधानिक निहितार्थ के रूप में कार्य करते हैं लेकिन वर्तमान मामले में विधायिका ने खुद को बाध्य रखा और इस प्रकार, नहीं किया। संवैधानिक प्रावधानों या अंतर्राष्ट्रीय कानून की अवहेलना में और भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 और 21 के संदर्भ में भी कानून बनाना। इसलिए, कानून को अंतर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार समझा जाना चाहिए। हमारे संविधान का भाग-III मूल और प्रक्रियात्मक अधिकारों की रक्षा करता है। इससे उत्पन्न होने वाले निहितार्थों को न्यायपालिका द्वारा प्रभावी ढंग से संरक्षित किया जाना चाहिए। इस क्षेत्र

में कार्यरत संवैधानिक और अंतर्राष्ट्रीय कानून को ध्यान में रखते हुए संविधि का एक प्रासंगिक अर्थ सौंपा जाना आवश्यक है।

[लिवरपूल और लंदन एस.पी. एंड आई एसोसिएशन लिमिटेड बनाम एमवी सी सक्सेस और । एनएनआर, [2004] 9 एससीसी 512 देखें]

रेजिना (डेली) बनाम गृह विभाग के लिए राज्य का सचिव, (2001) 2 एसी 532, लॉर्ड स्टीन ने देखा कि कानून के संदर्भ में निम्नलिखित में सब कुछ है:

"28. समीक्षा के पारंपरिक आधारों और आनुपातिकता दृष्टिकोण के बीच दृष्टिकोण में अंतर इसलिए कभी-कभी अलग-अलग परिणाम दे सकता है। इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि कन्वेंशन अधिकारों से जुड़े मामलों का सही तरीके से विश्लेषण किया जाना चाहिए। इसका मतलब यह नहीं है कि योग्यता समीक्षा में बदलाव आया है। इसके विपरीत, जैसा कि प्रोफेसर जोवेल [2000] पीएल 671, 681 ने बताया है कि न्यायाधीशों और प्रशासकों की संबंधित भूमिकाएं मौलिक रूप से अलग हैं और रहेंगी। इस सीमा तक प्रेक्षणों की सामान्य अवधि महमूद [2001] डब्ल्यूएलआर 840 सही हैं। और कानून एलजे ने महमूद, में पेज 847, कंडिका 18 में जोर दिया, "कि एक सार्वजनिक कानून मामले में समीक्षा की तीव्रता हाथ में विषय वस्तु पर निर्भर करेगी"। कन्वेंशन अधिकारों से जुड़े मामलों में भी ऐसा ही है। कानून के संदर्भ में सब कुछ है। भारत के संविधान और किशोर न्याय विधानों को वर्तमान परिद्रश्य के संदर्भ में और अंतर्राष्ट्रीय संधियों और अभिसमयों को ध्यान में रखते हुए आवश्यक रूप से समझा जाना चाहिए। हमारा संविधान विश्व समुदाय की उन संस्थाओं पर ध्यान देता है जिनका सृजन किया गया था। कुछ कानूनी उपकरण जिन्होंने मानव अधिकारों और मानवता की मौलिक स्वतंत्रता की घोषणा की है, को अपनाया गया था, लेकिन समय के साथ कई देशों में नए अधिकार भी पाए गए, उदाहरण के लिए, दक्षिण अफ्रीका (एसवी मकवानयाने, (1995) 3 एसए 391), कनाडा (संदर्भ पुन: लोक सेवा कर्मचारी संबंध अधिनियम (अल्बर्टा), [1987] 1 एससीआर 313 पर 348), जर्मनी (निर्दोषता का अनुमान और मानव अधिकारों पर यूरोपीय सम्मेलन,(1987) बीवीइआरएफजीइ 74, 358; न्यूजीलैंड (तेवतिया बनाम आप्रवासन मंत्री, डी (1994) 2 एनजेडएलआर पर 266), यूनाइटेड किंगडम (प्रैट बनाम जमैका के लिए अटॉर्नी-जनरल, (1994) 2 एसी और संयुक्त राज्य अमेरिका (एटकिंस बनाम वर्जीनिया, (2002) 536 यूएस 304 और लॉरेंस बनाम टेक्सास, (2003) 539 यूएस 558)। मानवाधिकारों के संरक्षण के संबंध में नए विचारों ने मानव मन पर कब्जा कर लिया था।

(देखें हम्दी बनाम रम्सफेल्ड, (2004) 72 यूएसएलडब्ल्यू 4607, रसेल बनाम बुश, (2004) 72 यूएसएलडब्ल्यू 4596 और रम्सफील्ड बनाम पदिला, (2004) 72 यूएसएलडब्ल्यू 4584)।

अब, संविधान न केवल "भारत के लोगों के लिए जिन्होंने इसे बनाया और इसे अपने शासन के लिए स्वीकार किया, पर बात करता है, लेकिन अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के लिए भी भारतीय राष्ट्र के मूल कानून के रूप में जो उस समुदाय का सदस्य है"। अनिवार्य रूप से, इसका अर्थ में कानूनी संदर्भ से प्रभावित होता है जिसे इसे संचालित करना चाहिए।

जिन कानूनी साधनों और मौलिक स्वतंत्रताओं की घोषणा की गई है, वे मानव गरिमा और संयुक्त राष्ट्र के चार्टर में स्थापित हैं, जो पहले ज्ञात नहीं थे, जो आज प्रकट होते हैं। [संयुक्त राष्ट्र का चार्टर, 26.6.1945 को सैन फ्रांसिस्को में हस्ताक्षरित। प्रस्तावना]। राजनीतिक,सामाजिक और आर्थिक विकास संविधान के अर्थ पर प्रकाश डाल सकता है।

लॉरेंस (ऊपर) में, सुप्रीम कोर्ट के लिए कैनेडी न्यायमूर्ति, अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार कानून के संदर्भ के बारे में, निष्कर्ष निकाला:

"क्या उन लोगों ने नियत प्रक्रिया खंडों को आकर्षित और पुष्टि की थी। पांचवां संशोधन या चौदहवां संशोधन अपनी कई गुना संभावनाओं में स्वतंत्रता के घटकों को जानता है, वे अधिक विशिष्ट हो सकते हैं। उन्होंने यह नहीं माना कि उनके पास यह अंतर्दृष्टि है। वे जानते थे कि समय हमें कुछ सच्चाइयों से अंधा कर सकता है और बाद की पीढ़ियां देख सकती हैं कि एक बार आवश्यक और उचित समझे जाने वाले कानून वास्तव में केवल दमन करने के लिए काम करते हैं। जैसा कि संविधान समाप्त होता है, हर पीढ़ी में व्यक्ति अधिक स्वतंत्रता की अपनी खोज में अपने सिद्धांतों का आह्वान कर सकते हैं।

इसलिए, हमारी राय में, उपरोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए प्रश्नों का निर्धारण किया जाना चाहिए।

शीघ्र कार्यवाही:

नियमों के नियम 20.1 के संदर्भ में हम देख सकते हैं कि कुछ क़ानून, उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका के कुछ राज्यों के परिवार न्यायालय अधिनियम में किशोर कार्यवाही के प्रत्येक चरण को नियंत्रित करने वाली समय सीमाएं स्थापित करने के प्रावधान शामिल हैं,

जिसका उद्देश्य कार्यवाही के सभी चरणों में त्वरित और निश्चित निर्णय का आश्वासन देना है। (फ्रैंक सी, 70 एनवाई.2 घ 408 देखें)

इसी तरह के मुद्दे की जांच कैलिफोर्निया के सुप्रीम कोर्ट ने अल्फ्रेडो बनाम सुपीरियर कोर्ट, 849 त.2घ 1330 (कैल. 1993) में की थी, जिसमें एक किशोर ने रिहाई प्राप्त करने के लिए बंदी प्रत्यक्षीकरण की मांग की थी। अदालत ने माना कि चौथा संशोधन किशोर सुनवाई के लिए आवश्यक तत्परता के लिए अधिकार प्रदान करता है। अभिनिर्धारित किया गया था कि एक नाबालिग को समाप्ति पर रिहा किया जाना चाहिए। संस्थागत प्रतिबंधों से स्वतंत्रता में किशोर की रुचि के कारण हिरासत के लिए वैधानिक समय सीमा। अदालत ने निहित किया कि किशोर को रिहा करने के बाद सुनवाई के लिए दिया गया समय बढ़ाया जाएगा, और यह बर्खास्तगी एकमात्र आवश्यक उपाय नहीं है।

रॉबिन्सन बनाम टेक्सास, 707 एस.डब्लू.2ख 47, टेक्सास कोर्ट ऑफ अपील्स ने माना कि त्वरित परीक्षण निरंतरता के लिए समय की गणना में शामिल नहीं किया जाना चाहिए। उस मामले में, अदालत ने पाया कि अपीलकर्ता के अटॉर्नी द्वारा हस्ताक्षरित रीसेट फॉर्म के आधार पर निरंतरता को त्वरित सुनवाई के लिए वैधानिक समय सीमा से बाहर रखा गया था।

इलिनोइस बनाम स्टफलेबीन, 392 एनई 2घ 414, इलिनोइस के अपीलीय न्यायालय ने माना कि वैधानिक सीमा से परे एक किशोर को हिरासत में लेने का उपाय तत्काल रिहाई थी, बर्खास्तगी नहीं। स्टफलेबीन में, अदालत ने वैधानिक से अधिक कैद के आधार पर बर्खास्तगी के लिए एक परिवीक्षाधीन के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया।

इस संदर्भ में विचार के लिए उठने वाले प्रश्न हैं:

(i). अपराधी की आयु का निर्धारण करने में तारीख क्या होगी, अर्थात, जब अदालत में पेश किया गया था, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा अर्नित दास बनाम बिहार राज्य, [2000] 5 एससीसी 488 या जिस तारीख को अपराध किया गया था, जैसा कि उमेश चंद्र बनाम राजस्थान राज्य, [19821 2 एससीसी 202 में अभिनिर्धारित किया गया है।

(ii). क्या 2000 का अधिनियम उन मामलों में लागू होगा जो इसके प्रवर्तन से पहले लंबित थे।

पुनः प्रश्न संख्या I :

हमने यहां पहले देखा है कि उमेश चंद्र (ऊपर) और अर्नित दास (ऊपर) में निर्णय एक-दूसरे के विरोध में हैं। जबकि उमेश चंद्र (ऊपर) के मामले में, इस न्यायालय द्वारा एक स्पष्ट निष्कर्ष दर्ज किया गया है कि अधिनियम की प्रयोज्यता के लिए प्रासंगिक तारीख वह तारीख है जिस पर अपराध होता है; अर्नित दास (ऊपर), लाहोटी, न्यायमूर्ति (तब मुख्य न्यायाधीश के रूप में एक डिवीजन बेंच ने कहा कि अधिनियम और योजना की धारा 8 (क) के साथ-साथ अधिनियम का मसौदा तैयार करने में संसद द्वारा नियोजित वाक्यांश से पता चलता है कि किशोर की उम्र का पता लगाने की प्रासंगिक तारीख वह तारीख है जब उसे बोर्ड के समक्ष पेश किया जाता है। यह देखा गया कि निर्विवाद रूप से किशोर की परिभाषा या अधिनियम में निहित कोई अन्य प्रावधान विशेष रूप से संदर्भ के लिए तारीख प्रदान नहीं करता है जिसके लिए अपराध को निरुद्ध किया जाना है ताकि यह पता लगाया जा सके कि वह किशोर है या नहीं।

अर्नित दास (ऊपर) में लिए गए दृष्टिकोण के समर्थन में, विद्वान अतिरिक्त प्रतिवादी की ओर से पेश सॉलिसिटर जनरल ने प्रस्तुत किया कि अधिनियम का उद्देश्य है किसी किशोर को इस अर्थ में संरक्षण प्रदान करना कि उसे सुरक्षात्मक अभिरक्षा में रखा जाए और उसे जेल या पुलिस लॉक-अप में न भेजकर अलग से निपटाया जाए, जिसे केवल तभी निर्देशित किया जा सकता है जब किशोर को गिरफ्तार किया जाता है या न्यायालय में पेश किया जाता है और उससे पहले नहीं। इसी प्रकार, दोषसिद्धि होने पर उसे सजा नहीं दी जा सकती और उसे संरक्षण गृह में रखने का निदेश दिया जा सकता है और, इस प्रकार, प्रासंगिक तारीख वह होगी जिस पर अपराधी किशोर को बोर्ड के समक्ष पेश किया जाता है।

इस तर्क को एक से अधिक कारणों से स्वीकार नहीं किया जा सकता है। उक्त अधिनियम न केवल एक हितकारी विधान है बल्कि उपचारात्मक भी है। इस अधिनियम का उद्देश्य वयस्क अपराधियों की तुलना में किशोर की देखरेख, संरक्षण और पुनर्वास प्रदान करना है। संयुक्त राष्ट्र मानक न्यूनतम के नियम 4 को ध्यान में रखते हुए किशोर न्याय प्रशासन के लिए नियम, यह भी वहन किया जाना चाहिए। ध्यान रखें कि आपराधिक जिम्मेदारी के नैतिक और मनोवैज्ञानिक घटक भी एक किशोर को परिभाषित करने वाले कारकों में से एक थे। पहला उद्देश्य, इसलिए, किशोर की भलाई को बढ़ावा देना और दूसरा उद्देश्य है

आनुपातिकता के सिद्धांत को लाओ जिससे और जिसके तहत अपराधी और दोनों की परिस्थितियों के प्रति प्रतिक्रिया की आनुपातिकता। पीड़ित सहित अपराध की रक्षा की जानी चाहिए। संक्षेप में, नियम 5 किशोर के किसी भी मामले में निष्पक्ष प्रतिक्रिया से कम और अधिक नहीं के लिए कहता है अपराध और अपराध। में प्रयुक्त 'किशोर' अभिव्यक्ति का अर्थ अपनी प्रकृति के कारण संविधि को निश्चित तिथि। किशोर शब्द को एक निश्चित अर्थ दिया जाना चाहिए। एक व्यक्ति एक उद्देश्य के लिए किशोर और अन्य उद्देश्य के लिए वयस्क नहीं हो सकता है। के आसपास संवैधानिक और सांविधिक योजना को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक नहीं था संसद के लिए विशेष रूप से यह कहना कि किशोर की आयु होनी चाहिए अपराध के कमीशन की तारीख के अनुसार निर्धारित। वही अंतर्निहित है सांविधिक योजना में। क़ानून को निम्नलिखित के संबंध में माना जाना चाहिए योजना और मामलों की सामान्य स्थिति और उससे निकलने वाले परिणाम। आधुनिक दृष्टिकोण यह विचार करना है कि क्या कोई बच्चा नैतिक और आपराधिक जिम्मेदारी के मनोवैज्ञानिक घटक के साथ जी सकता है अर्थात्, चाहे बच्चा, अपने व्यक्तिगत विवेक और समझ के आधार पर कर सकता है। अनिवार्य रूप से असामाजिक व्यवहार के लिए जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए।

दंड विधान का निर्माण करते समय, कानून का उद्देश्य स्पष्ट रूप से ध्यान में रखा जाना चाहिए। एक किशोर द्वारा कथित रूप से किए गए अपराध के संबंध में समयबद्ध जांच और मुकदमे का महत्व स्पष्ट है जैसा कि यहां कुछ विवरणों में निपटाया गया है। जांच करते समय यह आशा की जाती है कि अभियुक्त को तत्काल गिरफ्तार कर लिया जाएगा। वह, उसकी गिरफ्तारी पर; यदि वह किशोर प्रतीत होता है, तो उसे पुलिस हिरासत में नहीं रखा जा सकता है और जमानत पर रिहा किया जा सकता है। यदि उसे गिरफ्तार करने वाले प्राधिकारी द्वारा जमानत पर रिहा नहीं किया जाता है, तो वह सक्षम न्यायालय अथवा बोर्ड के समक्ष प्रस्तुत किया जाना होता है। एक बार जब वह किशोर प्रतीत होता है, तो सक्षम अदालत और/या बोर्ड उसे जमानत के लिए रिहा करने पर उचित आदेश पारित कर सकता है या उसे सुरक्षात्मक हिरासत में भेज सकता है। किशोर की आयु के निर्धारण के उद्देश्य से जांच का सहारा लेने की आवश्यकता नहीं है यदि पेश किए गए व्यक्ति को किशोर होने के लिए भर्ती किया जाता है। जांच तभी आवश्यक होगी जब इस संबंध में कोई विवाद उठाया जाए। इस संबंध में सक्षम न्यायालय और (या बोर्ड) द्वारा अभियुक्त की स्थिति को ध्यान में रखते हुए निर्णय लिया जाना अपेक्षित है कि उसे जमानत पर रिहा किया जाए या सुरक्षात्मक हिरासत में भेजा जाए या पुलिस या न्यायिक हिरासत में भेजा जाए। उक्त प्रयोजन के लिए यह पता लगाना आवश्यक होगा कि क्या अपराध किए जाने की तारीख को

वह किशोर था या नहीं, अन्यथा जिस उद्देश्य के लिए अधिनियम लागू किया गया था, वह विफल हो जाएगा। उक्त अधिनियम के प्रावधान, जैसा कि यहां पहले इंगित किया गया है, स्पष्ट रूप से यह मानते हैं कि कार्यवाही में आवश्यक कदम न केवल प्रारंभिक चरण में एक विशेष प्रक्रिया अपनाने के उद्देश्य से बल्कि कार्यवाही के मध्यस्थ और अंतिम चरण के लिए भी उठाए जाने की आवश्यकता है। यदि संबंधित व्यक्ति किशोर है, तो उस पर अन्य वयस्क अभियुक्तों के साथ मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। उसका परीक्षण बोर्ड द्वारा अलग से आयोजित किया जाना चाहिए। नियम 20.1 को ध्यान में रखते हुए के तहत उनके मामले को बिना किसी अनावश्यक देरी के निर्धारित किया जाना आवश्यक है। विचारण में, किशोर के अधिकार को उसकी निजता के संबंध में संरक्षित किया जाना चाहिए। वह एक कानूनी सलाहकार द्वारा प्रतिनिधित्व करने और मुफ्त कानूनी सहायता के लिए हकदार है, यदि वह इसके लिए आवेदन करता है। उसके माता-पिता और/या अभिभावक भी कार्यवाही में भाग लेने के हकदार हैं। न्यायालय उन सामाजिक जांच रिपोर्टों पर विचार करने का हकदार होगा जिनमें पृष्ठभूमि और परिस्थितियां जिनमें किशोर रह रहा था और जिस स्थिति में अपराध किया गया था, उसकी उचित जांच की जा सकती है ताकि सक्षम प्राधिकारी द्वारा मामले के किशोर अधिनिर्णय को सुविधाजनक बनाया जा सके। सभी चरणों में, न्यायालय/बोर्ड से शीघ्रता से उपयुक्त आदेश पारित करने की अपेक्षा की जाती है। अपने मामले का निपटारा करने के लिए किशोर का अधिकार शीघ्रता से एक वैधानिक और संवैधानिक अधिकार है।

अंतिम चरण में भी, अर्थात् अपराध करने का दोषी पाए जाने के बाद, उसके साथ वयस्क कैदियों की तुलना में अलग व्यवहार किया जाना चाहिए। केवल इसलिए कि उसकी आयु अधिनियम की धारा 26 के संदर्भ में सक्षम न्यायालय या बोर्ड द्वारा विवाद के मामले में निर्धारित की जानी है, इसका मतलब यह नहीं होगा कि उसके लिए प्रासंगिक तारीख वह होगी जिस पर उसे बोर्ड के समक्ष पेश किया जाएगा। यदि इस तरह के तर्क को स्वीकार कर लिया जाता है, तो इसका परिणाम बेतुकापन होगा, क्योंकि किसी दिए गए मामले में, यह पुलिस अधिकारियों के लिए खुला होगा कि वे उसे बोर्ड के समक्ष पेश न करें, इससे पहले कि वह किशोर न रहे। यदि उसे किशोर होने के बाद पेश किया जाता है, तो बोर्ड के लिए यह आवश्यक नहीं हो सकता है कि वह उसे सुरक्षात्मक हिरासत में भेजे या उसे जमानत पर रिहा कर दे, जिसके परिणामस्वरूप उसे न्यायिक या पुलिस हिरासत में भेजा जाएगा जो उस उद्देश्य को विफल कर देगा जिसके लिए अधिनियम अधिनियमित किया गया था। कानून को अनिश्चित स्थिति में लागू नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा, अधिनियम के संदर्भ में निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार, जिसमें प्रक्रियात्मक सुरक्षा शामिल होगी, किशोर का

मौलिक अधिकार है। किशोर के खिलाफ कार्यवाही अधिनियम के प्रावधानों के अनुरूप होनी चाहिए।

दिलीप साहा बनाम स्टेट ऑफ़ वेस्ट बंगाल के मामले में एआईआर(1978) कलकत्ता 529, कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक पूर्ण पीठ के निर्णय में इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि गणना की तारीख वह तारीख होगी जिस पर अपराध किया गया है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 को निम्नलिखित शब्दों में संदर्भित किया गया है

"22. यदि हम धारा 28 की व्याख्या इस अर्थ में करते हैं कि यह किसी बच्चे और वयस्क के संयुक्त परीक्षण को केवल तभी प्रतिबंधित करता है जब परीक्षण के समय बच्चा 'बच्चा' हो, तो वह व्याख्या संविधान के अनुच्छेद 20 (1) के प्रावधानों के खिलाफ जाएगी जो निर्धारित करती है कि किसी भी व्यक्ति को अधिनियम के कमीशन के समय लागू कानून के उल्लंघन के अलावा किसी भी अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया जाएगा एक अपराध के रूप में आरोपित किया गया है और न ही उससे अधिक दंड के अधीन किया जा सकता है जो अपराध के कमीशन के समय लागू कानून के तहत लगाया जा सकता है।

हम, सम्मान के साथ, उक्त अवलोकन से सहमत हैं।

यह सर्वविदित है कि इस संविधि का अर्थ इस प्रकार लगाया जाना चाहिए के रूप में यह प्रभावी और ऑपरेटिव के सिद्धांत पर बनाने के लिए उचित निर्माण का नियम। अदालतें किसी भी निर्माण के खिलाफ दृढ़ता से झुकती हैं जो एक क़ानून को निरर्थक बना देती हैं। जब दो अर्थ दिए जाते हैं, एक क़ानून को बिल्कुल अस्पष्ट, पूरी तरह से असभ्य और बिल्कुल अर्थहीन बनाता है और दूसरा निश्चितता और सार्थक की ओर ले जाता है, तो ऐसी स्थिति में बाद वाले का पालन किया जाना चाहिए। [देखें तिनसुखिया इलेक्ट्रिक सप्लाई कंपनी लिमिटेड बनाम असम राज्य और अन्य, [1989] 3 एससीसी 709 [आंध्र बैंक बनाम बी सत्यनारायण और अन्य [2004] 2 एससीसी 657 और भारतीय हस्तशिल्प एम्पोरियम और अन्य [2003] 7 एससीसी 589 देखें।

विद्वान अपर सॉलिसिटर जनरल का यह प्रस्तुत करना कि उमेश चंद्र (ऊपर) में इस न्यायालय ने गलत तरीके से मेन्स रेया को आरोपित करने के परीक्षण को लागू किया है कि बाल अधिनियम छोटे बच्चों को उनके आपराधिक कृत्यों के परिणामों से बचाने के लिए अधिनियमित किया गया था, इस आधार पर कि उस उम्र में उनके दिमाग को वयस्क के मामले में परिपक्व नहीं कहा जा सकता है, इसमें कुछ सार हो सकता है लेकिन कानून के

उक्त कथन को नियमों के नियम 4.1 के संदर्भ में पढ़ा और समझा जाना चाहिए। अधिनियम को उसके उचित परिप्रेक्ष्य में समझा जाएगा।

अर्नित दास (ऊपर) के कंडिका 17 में उठाया गया प्रश्न उचित नहीं है। एक काल्पनिक प्रश्न केवल एक काल्पनिक उत्तर की ओर ले जाएगा। एक उपयुक्त मामले में अदालत एक आदेश पारित करने के लिए शक्तिहीन नहीं है जैसा कि कानून के तहत विचार किया जाता है यदि स्थिति ऐसी मांग करती है, लेकिन केवल इसलिए कि एक व्यक्ति को अपनी इच्छा से या जांच एजेंसी द्वारा अपनाई गई साजिशों के कारण बहुमत प्राप्त करने के बाद अदालत के समक्ष पेश किया जाता है, तो यह इस तथ्य का निर्धारण नहीं होगा कि उक्त व्यक्ति के साथ अलग तरह से निपटा जाना है। कानून केवल अपवादों के अधीन प्रक्रियाओं के सख्त पालन का पक्षधर है। अर्नित दास (ऊपर) में कोर्ट ने देखा:

"16.....प्रस्तावना अपराध के बाद की चीजों के लिए प्रावधान करने वाले अधिनियम के लिए बोलती है। उद्देश्यों और कारणों के कथन में नियोजित कई अभिव्यक्तियाँ मुखर रूप से इस दृष्टिकोण का समर्थन करती हैं। अधिनियम का उद्देश्य देश में एक समान किशोर न्याय प्रणाली तैयार करना है, जेल में रहने या बच्चे के पुलिस लॉक-अप से बचना है; और किशोर अपराध की रोकथाम और उपचार के लिए प्रदान करना, देखभाल, संरक्षण, आदि के लिए किशोरावस्था के बाद। संक्षेप में, अधिनियम द्वारा कवर किया जाने वाला क्षेत्र वह नहीं है जिसके कारण किशोर अपराध हुआ था, बल्कि वह क्षेत्र जब एक किशोर ने अपराध किया है, तो अपराध के बाद की देखभाल के लिए रखा जाता है।“

बहुत सम्मान के साथ, हम कानून के उक्त कथन से सहमत नहीं हो सकते। यह कहना गलत है कि प्रस्तावना में केवल अपराध के बाद की बातों की बात की गई है। इस अधिनियम में न केवल विभिन्न अभिसमयों में निर्धारित मानकों बल्कि अन्य सभी अंतर्राष्ट्रीय लिखतों को ध्यान में रखते हुए किशोरों से संबंधित मौजूदा कानून को पुन अधिनियमित करने के लिए देश के दायित्वों का भी उल्लेख है। इसमें कहा गया है कि उक्त अधिनियम को अन्य बातों के साथ-साथ किशोरों से संबंधित कानून को समेकित और संशोधित करने के लिए अधिनियमित किया गया था। एक बार जब कानून अपराधी किशोरों या कानून के साथ संघर्ष में किशोरों से संबंधित होता है, तो इसका मतलब पूर्व और बाद के अपराध दोनों से होगा।

1986 के अधिनियम के अंतर्गत किशोर की परिभाषा निस्संदेह उस व्यक्ति से संबंधित है जिसे अपराध करते हुए पाया गया है लेकिन 2000 के अधिनियम में इसे स्पष्ट किया गया है। 1986 अधिनियम के प्रावधान, जैसा कि यहां पहले देखा गया है, न केवल उन किशोरों को संरक्षण देने की मांग की है जिन्हें अपराध करते हुए पाया गया है, बल्कि उन लोगों को भी संरक्षण प्रदान किया गया है जिन पर इसके लिए आरोप लगाया गया था। 1986 के अधिनियम की धारा 3 के साथ-साथ 2000 के अधिनियम के संदर्भ में, जब एक जांच शुरू की गई है, भले ही किशोर ने ऐसा नहीं किया है क्योंकि वह 16 और 18 वर्ष की आयु पार कर चुका है, जैसा भी मामला हो, ऐसे व्यक्ति के संबंध में इसे जारी रखा जाना चाहिए जैसे कि वह किशोर बना रहा था। इसलिए 1986 के अधिनियम की धारा 3 को प्रभावी नहीं किया जा सकता है यदि यह माना जाता है कि यह केवल किशोर के अपराध के बाद लागू होता है।

अधिनियम के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र में अपराध किए जाने की तुलना में किशोर अपराध की स्थिति शामिल है। ऐसी स्थिति में उसे अपराध के बाद सुरक्षा और संबल प्रदान किया जाना है और उक्त उद्देश्य के लिए वह तारीख जब अपराध हुआ था, प्रासंगिक तारीख होगी। इसलिए, यह माना जाना चाहिए कि किशोर की उम्र का निर्धारण करने की प्रासंगिक तारीख वह होगी जिस पर अपराध किया गया है और जब उसे अदालत में पेश नहीं किया जाता है।

सन्दर्भ: प्रश्न संख्या 2 :

2000 के अधिनियम की मुख्य विशेषताओं को शुरुआत में देखा जा सकता है।

2000 के अधिनियम की धारा 1 (3) में कहा गया है कि यह उस तारीख को लागू होगा जिसे केंद्र सरकार आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा निर्धारित कर सकती है। केन्द्र सरकार ने विधिवत अधिसूचना जारी की; उक्त अधिनियम के उपबंध नियत तारीख के रूप में विनिदष्ट किए गए हैं जिससे 1-4-2001 से उक्त अधिनियम के उपबंध लागू होंगे। इस प्रकार, अधिनियम अपने प्रचालन में लागू है। हालाँकि, 2000 के अधिनियम ने 1986 के अधिनियम को निरस्त कर दिया है। इसने विभिन्न लिंग के किशोर के बीच अंतर को इस कारण से मिटा दिया है कि एक पुरुष किशोर भी किशोर होगा अगर उसने 18 साल की उम्र पार नहीं की है।

1986 के अधिनियम के अनुसार 16 वर्ष से अधिक आयु का व्यक्ति किशोर नहीं था। इस दृष्टि से इस प्रश्न का उत्तर दिया जाना चाहिए कि क्या 16 वर्ष से अधिक आयु का कोई

व्यक्ति वर्ष 2000 के अधिनियम के दायरे में 'किशोर' बन जाता है या नहीं, इसका उत्तर उसके उद्देश्य और उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए दिया जाना चाहिए।

1986 के अधिनियम के अनुसार, एक व्यक्ति जो किशोर नहीं था, उस पर किसी भी अदालत में मुकदमा चलाया जा सकता था। 2000 के अधिनियम की धारा 20 ऐसी स्थिति का ख्याल रखती है। यह कहते हुए कि इसके बावजूद उस न्यायालय में विचारण जारी रहेगा जैसे कि वह अधिनियम पारित नहीं किया गया है और यदि वह किसी अपराध के होने का दोषी पाया जाता है, तो इस आशय का निष्कर्ष दोषसिद्धि के निर्णय में दर्ज किया जाएगा, यदि कोई हो, लेकिन किशोर के संबंध में कोई सजा पारित करने के बजाय, उसे बोर्ड को भेजा जाएगा जो अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार आदेश पारित करेगा जैसे कि वह जांच पर संतुष्ट हो गया है कि एक किशोर ने अपराध किया है। इस प्रकार, उक्त प्रावधान में एक कानूनी कल्पना बनाई गई है। एक कानूनी कल्पना, जैसा कि सर्व ज्ञात है, को इसका पूर्ण प्रभाव दिया जाना चाहिए, हालांकि इसकी सीमाएं हैं। [देखें भावनगर विश्वविद्यालय बनाम पालिताना चीनी मिल (पी.) लिमिटेड और अन्य, [2003] 2 एससीसी एल आईटीडब्ल्यू सिग्नोड इंडिया लिमिटेड बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क कलेक्टर, (2003) 9 स्केल 720 और देखें अशोक लेलैंड लिमिटेड बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य, [2004] 3 एससीसी एल]

अभिव्यक्ति "जैसे कि" के प्रभाव पर हाल ही में मैसर्स मारुति उद्योग लिमिटेड बनाम राम लाल, (सीए संख्या 2946 ऑफ (2002) 25.1.2005 को निपटाया गया) में विचार किया गया है।

इस प्रकार, कानूनी कल्पना के कारण, एक व्यक्ति, हालांकि किशोर नहीं है, को सजा देने के उद्देश्य से बोर्ड द्वारा एक माना जाना चाहिए जो इस स्थिति का ख्याल रखता है कि व्यक्ति हालांकि एच के संदर्भ में किशोर नहीं है। 1986 अधिनियम लेकिन अभी भी उक्त सीमित उद्देश्य के लिए 2000 अधिनियम के तहत ऐसा माना जाएगा। अधिनियम लाभकारी परिणामों का प्रावधान करता है और इस प्रकार, इसे उदारतापूर्वक समझा जाना आवश्यक है।

हम इस प्रस्ताव से बेखबर नहीं हैं कि किसी लाभकारी विधान का इतनी उदारता से अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि किसी व्यक्ति को उसके सामने लाया जा सके जो वैधानिक योजना का उत्तर नहीं देता है। [देखें दीपल गिरीशभाई सोनी और अन्य बनाम यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बड़ौदा, [2004] 5 एससीसी 385]।

हालांकि, जैसा कि 2000 के अधिनियम के प्रावधानों से प्रतीत होता है कि 2000 अधिनियम की योजना ऐसी है कि ऐसा निर्माण संभव है। यह धारा 64 से भी स्पष्ट होगा जो एक ऐसे मामले से संबंधित है जहां एक व्यक्ति सजा काट रहा है, लेकिन यदि वह 2000 अधिनियम के अर्थ के भीतर किशोर है, जिसने 18 वर्ष की आयु पार नहीं की है, तो उसके प्रावधान लागू होंगे जैसे कि उसे बोर्ड द्वारा एक विशेष घर या संस्थान में भेजने का आदेश दिया गया था, जैसा भी मामला हो। 2000 के अधिनियम की धारा 20, इसलिए, लागू होगी जब दिनांक 1-4-2001 की स्थिति के अनुसार व्यक्ति की आयु 18 वर्ष से कम है। अधिनियम की धारा 20 को आकर्षित करने के उद्देश्य से, यह स्थापित किया जाना चाहिए कि: (i) लागू होने की तारीख को वह कार्यवाही जिसमें याचिकाकर्ता पर आरोप लगाया गया था, लंबित थी; और (ii) उस दिन वह 18 वर्ष से कम आयु का था। उक्त अधिनियम के प्रयोजन के लिए, उपरोक्त दोनों शर्तों को पूरा करना आवश्यक है। 2000 के उक्त अधिनियम के प्रावधानों के कारण, एक किशोर को दी गई सुरक्षा केवल विस्तारित की गई है, लेकिन ऐसा विस्तार पूर्ण नहीं है, बल्कि केवल एक सीमित है। यह सख्ती से लागू होगा जब धारा 20 या धारा 64 में निहित पूर्ववर्ती शर्तों को पूरा किया जाता है। उक्त प्रावधान बार-बार विशेष रूप से 'किशोर' या 'अपराधी किशोर' शब्दों का उल्लेख करते हैं। यह अधिनियम का उद्देश्य प्रतीत होता है और संसद के वास्तविक इरादे का पता लगाने के लिए, उद्देश्यपूर्ण निर्माण का नियम अपनाया जाना चाहिए। यदि कोई बच्चा वयस्क की संगति में बना रहता है तो अधिनियम का उद्देश्य विफल हो जाएगा। इस प्रकार, 2000 का अधिनियम केवल उक्त अधिनियम के अर्थ के भीतर एक किशोर को संरक्षण देने का इरादा रखता है, न कि एक वयस्क को। दूसरे शब्दों में, यद्यपि यह उस व्यक्ति पर लागू होगा जो अभी भी जी किशोर है और जिसकी आयु 18 वर्ष नहीं है लेकिन यह उस व्यक्ति पर लागू नहीं होगा जो उसके लागू होने की तारीख को 18 वर्ष की आयु प्राप्त कर चुका है या जिसने अपराध किए जाने की तारीख को 18 वर्ष की आयु प्राप्त नहीं की थी लेकिन अब किशोर नहीं रह गया है। किसी संविधि को भूतलक्षी प्रभाव से लागू करने पर प्रतिबंध केवल तभी लागू होता है। जब यह किसी व्यक्ति के निहित अधिकार को छीन लेता हो की धारा 20 के कारणों से अधिनियम किसी व्यक्ति में कोई निहित अधिकार नहीं छीना गया है, लेकिन इस तरह केवल किशोर को अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान की गई है।

रतन लाल बनाम बनाम पंजाब राज्य,[1964] 7 एससीआर 676, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:

"..... संविधान के अनुच्छेद 20 के अधीन, किसी भी व्यक्ति को किसी अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया जाएगा, सिवाय इसके कि वह किसी ऐसी विधि का उल्लंघन करता है जो उस समय प्रवृत्त हो। अधिनियम के कमीशन को अपराध के रूप में आरोपित किया गया है, और न ही उससे अधिक दंड के अधीन किया जा सकता है जो कि अपराध किए जाने के समय लागू कानून । लेकिन एक पूर्वव्यापी कानून जो केवल एक आपराधिक कानून की कठोरता को शांत करता है, उक्त निषेध के अंतर्गत नहीं आता है। यदि कोई विशेष कानून इस आशय का प्रावधान करता है, हालांकि यह पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू है, तो यह वैध होगा। सवाल यह है कि क्या ऐसा कानून पूर्वव्यापी है और यदि हां, तो किस हद तक किसी विशेष क़ानून की व्याख्या पर निर्भर करता है, ध्यान में रखते हुए कंसुशन के सुव्यवस्थित नियमों के लिए....."

विधियों की व्याख्या पर मैक्सवेल का जिक्र करते हुए, सुब्बा राव, न्यायमूर्ति ने कहा:

"... यह ऐसा मामला नहीं है जहां एक अधिनियम, जो अधिनियम से पहले अपराध नहीं था, को अधिनियम के तहत अपराध बनाया जाता है; न ही यह ऐसा मामला है जहां अधिनियम के तहत अधिनियम से पहले किसी अपराध के लिए प्राप्त दंड से अधिक दंड लगाया जाता है। यह एक ऐसा उदाहरण है जहां न तो अपराध की सामग्री और न ही सजा की सीमा परेशान है, लेकिन एक अभियुक्त के सुधार में मदद करने के लिए एक प्रावधान किया गया है अदालत की एजेंसी द्वारा। फिर भी, क़ानून एक अपराध को प्रभावित करता है प्रश्न में क्षेत्र में विस्तारित होने से पहले प्रतिबद्ध। इसलिए, यह एक कार्योत्तर कानून है और इसमें पूर्वव्यापी संचालन है। इस तरह के प्रावधान के दायरे पर विचार करते हुए हमें प्रावधानों के लिए हिंसा किए बिना न्यायिक राय की आधुनिक प्रवृत्ति द्वारा प्रतिपादित लाभकारी निर्माण के नियम को अपनाना चाहिए संबंधित अनुभाग का....."

एक बार फिर बशीर उर्फ़ एन.पी बशीर बनाम केरल राज्य, [2004] 3 एससीसी 609, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

"यदि अधिनियम में अभियुक्त के नुकसान के लिए कोई प्रावधान होता, तो निस्संदेह, यह अनुच्छेद 20 (1) में निहित पोस्ट फैक्टो कानून के खिलाफ नियम से प्रभावित होता। हालाँकि, हम पाते हैं 1060 कि संशोधन (कम से कम सजा संरचना को तर्कसंगत बनाने वाले) अभियुक्त के लिए अधिक फायदेमंद हैं और कानून की कठोरता को कम करने के बराबर हैं। नतीजतन, पूर्वव्यापी प्रभाव के बावजूद, उन्हें न्यायालय के समक्ष लंबित मामलों

या यहां तक कि संशोधन अधिनियम लागू होने की तारीख को जांच लंबित मामलों पर भी लागू किया जाना चाहिए। इस तरह के आवेदन को संविधान के अनुच्छेद 20 (1) से प्रभावित नहीं किया जाएगा।

यूनाइटेड किंगडम के मानवाधिकार अधिनियम, 1998 की धारा 6(1) और धारा 8 में भी मामलों के शीघ्र निपटान का प्रावधान है। आवश्यकता की पूर्ति न होने का प्रभाव कि एक आपराधिक आरोप को उचित समय के भीतर सुना जाए, हाल ही में हाउस ऑफ लॉर्ड्स के समक्ष विचार के लिए आया था। अटॉर्नी जनरल के संदर्भ में [(2001) का नंबर 2) [(2004) 2 कग 72] जिसमें यह माना गया कि उचित समय गारंटी के उल्लंघन के संबंध में उपाय प्रत्येक मामले में शामिल तथ्य पर निर्भर करेगा। एक अभियुक्त में इस तरह के अधिकार को धारण करते समय, यह देखा गया था:

"यह तर्क निर्भर करता है, जैसा कि कहा गया है, भीतर वर्गीकृत करने पर संदर्भित के रूप में एक उचित समय दायित्व जो इंगित करता है एक विशेषता सुनवाई या दृढ़ संकल्प जैसे निष्पक्ष, "सार्वजनिक", "स्वतंत्र" हैं, 'निष्पक्ष' और "कानून द्वारा स्थापित न्यायाधिकरण" आवश्यकताएं। यह इस प्रकार है वर्गीकरण जो मैं सुझाता हूं वह मौलिक रूप से गलत है। यह एक उचित समय के भीतर एक उचित समय दायित्व प्रदर्शन की गुणवत्ता से संबंधित है, न की सेवा की विशेषताओं के लिए या यहां सुनवाई या दायित्व के तहत व्यक्ति द्वारा प्रदान किया जाने वाला निर्धारण। यह सब अति-परिष्कृत लग सकता है लेकिन इसे बस प्रदर्शित किया जा सकता है दोनों भाषा के सामान्य उपयोग के मामले में और संदर्भ द्वारा दायित्वों के कानून के बुनियादी सिद्धांत।"

भारत में शीघ्र निपटान का ऐसा अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित है, अधिनियम की व्याख्या के उद्देश्य से इसकी प्रासंगिकता को कम नहीं किया जा सकता है।

जिले सिंह बनाम हरियाणा राज्य और अन्य, जेटी (2004) 8 एससी 589, लाहोटी, मुख्य न्यायमूर्ति, ने कहा कि पूर्वव्यापी के खिलाफ नियम उन अधिनियमों पर लागू नहीं किया जा सकता है जो प्रकृति में व्याख्यात्मक और घोषणात्मक हैं। [यह भी देखें आर. (उत्तले के आवेदन पर) बनाम गृह विभाग के लिए राज्य सचिव, (2004) 4 एआईआई इआर I]

दयाल सिंह बनाम स्टेट ऑफ़ राजस्थान जेटी (2004) अनुपूरक. एस.सी.37, इस न्यायालय ने रतन लाल (ऊपर) को संदर्भित करने पर अभिनिर्धारित किया:

"11. निर्णय इस सिद्धांत का अनुमोदन करता है कि पूर्वव्यापी कानून जो केवल आपराधिक कानून की कठोरता को शांत करता है, हालांकि संचालन में पूर्वव्यापी है, मान्य होगा। इस सिद्धांत को प्रतिपादित करने के बाद अदालत ने अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 11 की व्याख्या की और इस निष्कर्ष पर पहुंची कि प्रावधान की सही व्याख्या पर उच्च न्यायालय के पास अपीलीय चरण में शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार क्षेत्र था, और यह शक्ति उस मामले तक सीमित नहीं थी जहां ट्रायल कोर्ट वह आदेश दे सकता था। धारा की शब्दावली अपीलीय अदालत या उच्च न्यायालय को सक्षम करने के लिए पर्याप्त व्यापक थी जब मामला ऐसा आदेश देने के लिए इसके सामने आया। इसलिए, हम यह नहीं पाते हैं कि रतन लाल ने इस सुस्थापित सिद्धांत से हटकर कदम उठाया कि किसी भी व्यक्ति को कानून के उल्लंघन के अलावा किसी अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया जाएगा उस अधिनियम के कमीशन के समय बल में एक के रूप में आरोप लगाया अपराध, और न ही उस दंड से अधिक दंड के अधीन किया जाएगा जिसके साथ वह अपराध के कमीशन के समय लागू कानून के तहत लगाया गया हो सकता है। इस न्यायालय ने केवल यह सिद्धांत निर्धारित किया कि एक पूर्वव्यापी कानून जो केवल एक आपराधिक कानून की कठोरता को शांत करता है, उक्त निषेध के अंतर्गत नहीं आता है, और यदि कोई विशेष कानून उस प्रभाव का प्रावधान करता है, हालांकि पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू है, तो यह वैध होगा....."

किसी संविधि की व्याख्या उसके पाठ और संदर्भ पर निर्भर करती है और उस संबंध और उद्देश्य पर निर्भर करती है जिसके साथ उसे बनाया गया था।

2000 अधिनियम का उपरोक्त प्रावधान इसके अलावा एक उपचारात्मक क़ानून है। (देखें जी.पी. सिंह के प्रिंसिपल्स ऑफ स्टेट्यूटरी इंटरप्रिटेशन की चर्चा, नौवां संस्करण, 2004, पृष्ठ 733) इस प्रकार, उन्हें उदार निर्माण दिया जाना आवश्यक है।

लंबित कार्यवाही में लागू उपचारात्मक क़ानून का मतलब यह नहीं होगा जिससे उसके पीछे भूतलक्षी प्रभाव और पूर्वव्यापी प्रचालन किया जा रहा है।

हमारा यह कहने का इरादा नहीं है कि कोई अन्य दृष्टिकोण संभव नहीं है। लेकिन एक मामले में इस प्रकृति का जहां भूतलक्षी या भविष्यलक्षी के अनुसार एक अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान की गई थी

अंतर्राष्ट्रीय संधियों को आगे बढ़ाने और 1986 के अधिनियम के लागू होने के बाद संसद द्वारा एकत्र किए गए अनुभव को ध्यान में रखते हुए, हम सोचते हैं कि इसे इस तरह से

पढ़ा जाना चाहिए ताकि 2000 के अधिनियम के अंतर्गत किशोर को भी विस्तारित लाभ प्रदान किया जा सके। इसके अलावा, धारा 69 की उप-धारा (2) प्रदान करती है कि सभी कार्यवाही होगी नए अधिनियम के अंतर्गत आयोजित किया गया माना जाता है। यह भी सांकेतिक है तथ्य यह है कि नया अधिनियम, लागू सीमा तक, लंबित कार्यवाही जो 1986 अधिनियम के तहत शुरू की गई थी।

मॉडल नियम:

हालांकि, हम इस बात से सहमत नहीं हैं कि मॉडल नियमों को अधिनियम के प्रावधानों के संदर्भ में तैयार किया गया है ताकि उन सिद्धांतों को आकर्षित किया जा सके जो वैध रूप से बनाए गए नियमों को अधिनियम के हिस्से के रूप में माना जाना है। यह एक बात है कि वैध रूप से बनाए गए नियमों को अधिनियम के भाग के रूप में माना जाना चाहिए जैसा कि मुख्य वन संयोजक (वन्यजीव) और अन्य बनाम निसार खान, [2003] 4 एससीसी 595 और नेशनल इंश्योरेंस कंपनी, लिमिटेड बनाम स्वर्ण सिंह और अन्य, [2004] 3 एससीसी 297 लेकिन उक्त सिद्धांत का यहां कोई आवेदन नहीं है। उक्त अधिनियम के उपबंधों के उपबंधों के अनुसार केन्द्र सरकार के पास कोई नियम बनाने का कोई प्राधिकार नहीं है। नियम बनाने की किसी शक्ति के अभाव में यह कठिनाई को दूर करने के लिए शक्ति के सर्वव्यापी खंड का उल्लेख नहीं कर सकता है क्योंकि यह नहीं कहा गया है कि यदि अधिनियम के प्रावधान को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो किसी भी मॉडल नियम को बनाने की अनुमति है। केन्द्र सरकार एक सांविधिक घ पदाधिकारी है। इसके कार्य केवल अधिनियम की धारा 70 द्वारा सीमित हैं। इसे कोई नियम बनाने के लिए अधिकृत नहीं किया गया है। नियम बनाने की ऐसी शक्ति केवल राज्य को सौंपी गई है। इस प्रकार, केंद्र सरकार के पास इस मामले में कोई भूमिका नहीं है और न ही वह 'कठिनाइयों को दूर करने के लिए' अपनी शक्ति का सहारा लेकर ऐसी शक्ति का प्रयोग कर सकती है। नियम बनाने की शक्ति एक अलग शक्ति है जिसका कठिनाई को दूर करने की शक्ति से कोई लेना-देना नहीं है। कठिनाई या संदेह को दूर करने की शक्ति के कारण, केंद्र सरकार को कोई विधायी शक्ति प्रदान नहीं की गई है। संदेह या कठिनाई को दूर करने की शक्ति हालांकि एक वैधानिक शक्ति है, लेकिन यह विधायी शक्ति के समान नहीं है और इस प्रकार, अधिनियम के प्रावधानों को बदला नहीं जा सकता है। [देखें मेसर्स जालान ट्रेडिंग कंपनी प्राइवेट लिमिटेड बनाम मिल मजदूर सभा, एआईआर (1967) एससी 691 703 पर]

अतः अपराधी किशोर की आयु का निर्धारण की शर्तें मॉडल नियम 62 द्वारा नहीं किया जा सकता है। मुद्दे का निर्धारण करने में दूसरों पर कुछ दस्तावेजों को ध्यान में रखने के लिए अदालत को अनिवार्य करने वाला कोई भी कानून, केवल कानून द्वारा प्रदान किया जाना चाहिए। केवल वैध रूप से बनाया गया कानून ही भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 35 के आलोक में इस तरह के प्रश्न के निर्धारण के उद्देश्य से साक्ष्य की सराहना करने की अदालत की शक्ति को छीन सकता है। यह कार्य केन्द्र सरकार द्वारा कार्यकारी शक्ति का प्रयोग करके नहीं किया जा सकता है। (देखें यूनियन ऑफ़ इंडिया बनाम नवीन जिंदल, [2004] 2 एससीसी 510 और उत्तर प्रदेश राज्य बनाम जौहरी मल, [2004] 4 एससीसी 714)

बिरद मल सिंघवी बनाम आनंद पुरोहित, एआईआर (1988) एससी 1796 में, इस कोर्ट ने कहा:

"... धारा 35, तीन शर्तों के तहत स्वीकार्य दस्तावेज प्रस्तुत करना संतुष्ट होना चाहिए, सबसे पहले, जिस प्रविष्टि पर भरोसा किया जाता है वह एक में एक होना चाहिए सार्वजनिक या अन्य आधिकारिक पुस्तक, रजिस्टर या रिकॉर्ड, दूसरा, यह एक तथ्य या प्रासंगिक तथ्य बताते हुए एक प्रविष्टि होनी चाहिए, और तीसरा, यह एक लोक सेवक द्वारा अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में किया जाना चाहिए, या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा विशेष रूप से कानून द्वारा आदेशित कर्तव्य के प्रदर्शन में किया जाना चाहिए। स्कूल रजिस्टर में की गई जन्मतिथि से संबंधित प्रविष्टि अधिनियम की धारा 35 के तहत प्रासंगिक और स्वीकार्य है, लेकिन स्कूल रजिस्टर में किसी व्यक्ति की आयु के बारे में प्रविष्टि का कोई अधिक साक्ष्य मूल्य नहीं है, जो उस सामग्री के अभाव में व्यक्ति की उम्र साबित करने के लिए अधिक साक्ष्य मूल्य नहीं है जिस पर उम्र दर्ज की गई थी।

सुशील कुमार बनाम राकेश कुमार, [2003] 8 एससीसी 673 में, इस न्यायालय के रूप में पीपल रिप्रजेंटेशन एक्ट, 1951 के प्रतिनिधित्व - की धारा 36 (2) के संदर्भ में एक उम्मीदवार की आयु के निर्धारण के संबंध में:

"32. चुनाव याचिका में किसी व्यक्ति की आयु न केवल रिकॉर्ड पर रखी गई सामग्री के आधार पर निर्धारित की जानी चाहिए, बल्कि उसमें शामिल होने वाली परिस्थितियों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। चुनाव याचिका में लगाए गए आरोपों को साबित करने का प्रारंभिक बोझ हालांकि चुनाव याचिकाकर्ता पर था, लेकिन उन तथ्यों को साबित करने के

लिए जो प्रतिवादी के विशेष ज्ञान के भीतर थे, साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के संदर्भ में बोझ उस पर था। यह भी ट्राइट है कि जब दोनों पक्षों ने सबूत पेश किए हैं तो सबूत के दायित्व का सवाल अकादमिक हो जाता है [देखें यूनियन ऑफ इंडिया बनाम सुगौली शुगर वर्क्स (पी.) लिमिटेड, [1976] 3 एससीसी 32 और कॉक्स एंड किंग्स (एजेंट) लिमिटेड बनाम वर्कमेन, [1977] 2 एससीसी 705]। इसके अलावा, किसी पार्टी की ओर से लिस में प्रवेश उस पर बाध्यकारी होगा और किसी भी स्थिति में एक अनुमान लगाया जाना चाहिए कि इसे स्थापित करने के लिए लिया गया है।

इस न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ बिरद मल सिंघवी बनाम आनंद पुरोहित, एआईआर (1988) एससी 1796 और कई अन्य निर्णयों का पालन किया।

इसलिए, न्यायालय को हमारे उपरोक्त निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए अपीलकर्ता की आयु का निर्धारण करना चाहिए कि किशोर की उम्र की गणना के लिए प्रासंगिक तारीख घटना की तारीख होगी, न कि वह तारीख जिस पर उसे बोर्ड के समक्ष पेश किया गया था।

उपरोक्त चर्चाओं का परिणाम यह है :

(i). 1986 के अधिनियम के अनुसार, अपराधी की आयु की गणना की जानी चाहिए उस तारीख से जब कथित अपराध किया गया था;

(ii). 2002 के अधिनियम में 1986 अधिनियम के तहत लंबित मामलों में सीमित आवेदन होगा;

(iii). केन्द्र सरकार द्वारा बनाए गए आदर्श नियमों, जिनमें कोई विधिक बल नहीं है, को प्रभावी नहीं किया जा सकता है।

(iv). इस प्रकार, अदालत भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 35 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए किशोर की उम्र निर्धारित करने के उद्देश्य से साक्ष्य के सामान्य नियमों को लागू करने का हकदार होगा।

उपरोक्त के अधीन, मैं, सम्मान के साथ, भाई सेमा, न्यायमूर्ति, द्वारा निकाले गए निष्कर्षों से सहमत हूं।

अपील का निपटारा कर दिया गया।

यह अनुवाद मदन मोहन प्रिय, पैनल अनुवादक द्वारा किया गया।